आत्मसाक्षात्कार

पाने के लिए सरल और सटीक विज्ञान



ज्ञानी पुरुष दादाश्री (दादा भगवान)

ज्ञानी पुरुष परम पूज्य दादा भगवान की दिव्य ज्ञानवाणी

संकलन : पूज्यश्री दीपकभाई देसाई

आत्मसाक्षात्कार

प्राप्त करने का सरल और सटीक विज्ञान

प्रकाशक : अजीत सी. पटेल, दादा भगवान विज्ञान फाउन्डेशन, 1, वरूण अपार्टमेन्ट, 37, श्रीमाली सोसायटी, नवरंगपुरा पुलिस स्टेशन के सामने, नवरंगपुरा, अहमदाबाद - 380009, Gujarat, India. **फोन :** +91 79 3500 2100

नयी रीप्रिन्ट : अक्तूबर, 2021

भाव मूल्य : 'परम विनय' और 'मैं कुछ भी जानता नहीं', यह भाव!

द्रव्य मूल्य : 10 रुपए

मुद्रक : अंबा मल्टीप्रिन्ट, B-99, इलेक्ट्रॉनिक्स GIDC, क-6 रोड, सेक्टर-25, गांधीनगर-382044. Gujarat, India. **फोन :** +91 79 3500 2142

ISBN/eISBN : 978-93-86289-27-8

Printed in India

‘दादा भगवान’ कौन?

जून 1958 की एक संध्या का करीब छः बजे का समय, भीड़ से भरा सूरत शहर का रेल्वे स्टेशन पर बैठे श्री ए.एम.पटेल रूपी देहमंदिर ‘दादा भगवान’ पूर्ण रूप से प्रकट हुए और कुदरत ने सर्जित किया अध्यात्म का अद्भुत आश्चर्य। एक घंटे में उन्हें विश्वदर्शन हुआ। ‘मैं कौन? भगवान कौन? जगत् कौन चलाता है? कर्म क्या? मुक्ति क्या?’ इत्यादि जगत् के सारे आध्यात्मिक प्रश्नों के संपूर्ण रहस्य प्रकट हुए।

उन्हें प्राप्ति हुई, उसी प्रकार केवल दो ही घंटों में अन्य को भी प्राप्ति करवाते थे, उनके अद्भुत सिद्ध हुए ज्ञानप्रयोग से। उसे अक्रम मार्ग कहा। क्रम अर्थात् सीढ़ी दर सीढ़ी, क्रमानुसार ऊपर चढ़ना! अक्रम, अर्थात् बिना क्रम के, लिफ्ट मार्ग, शॉर्ट कट!

वे स्वयं प्रत्येक को ‘दादा भगवान कौन?’ का रहस्य बताते हुए कहते थे कि ‘‘यह जो आपको दिखते हैं वे दादा भगवान नहीं हैं, हम ज्ञानी पुरुष हैं और भीतर प्रकट हुए हैं, वे ‘दादा भगवान’ हैं। जो चौदह लोक के नाथ हैं। वे आप में भी हैं, सभी में हैं। आपमें अव्यक्त रूप में रहे हुए हैं और ‘यहाँ’ हमारे भीतर संपूर्ण रूप से व्यक्त हुए हैं। मैं खुद भगवान नहीं हूँ। मेरे भीतर प्रकट हुए दादा भगवान को मैं भी नमस्कार करता हूँ।’’

आत्मज्ञान प्राप्ति की प्रत्यक्ष लिंक

परम पूज्य दादा भगवान (दादाश्री) गाँव-गाँव, देश-विदेश परिभ्रमण करके मुमुक्षुजनों को सत्संग और आत्मज्ञान की प्राप्ति करवाते थे। दादाश्री ने अपने जीवनकाल में ही पूज्य डॉ. नीरू बहन अमीन (नीरू माँ) को आत्मज्ञान प्राप्त करवाने की ज्ञानसिद्धि प्रदान की थी। दादाश्री के देहविलय पश्चात् नीरू माँ उसी प्रकार मुमुक्षुजनों को सत्संग और आत्मज्ञान की प्राप्ति, निमित्त भाव से करवा रही थीं। पूज्य दीपक भाई देसाई को दादाश्री ने सत्संग करने की सिद्धि प्रदान की थी। नीरू माँ की उपस्थिति में ही उनके आशीर्वाद से पूज्य दीपक भाई 2003 से देश-विदेश में कई जगहों पर जाकर आत्मज्ञान करवा रहे थे, जो 2006 में नीरू माँ के देहविलय पश्चात् आज भी जारी ही है। इस आत्मज्ञान प्राप्ति के बाद हज़ारों मुमुक्षु संसार में रहते हुए, ज़िम्मेदारियाँ निभाते हुए भी मुक्त रहकर आत्मरमणता का अनुभव करते हैं।

अक्रम विज्ञान

आत्मसाक्षात्कार

प्राप्त करने का सरल और सटीक विज्ञान

1. मनुष्य जीवन का ध्येय क्या है?

यह तो, पूरी लाइफ फ्रेक्चर हो गई है। क्यों जी रहे हैं, उसका भी भान नहीं है। यह बिना ध्येय का जीवन, इसका कोई मतलब ही नहीं है। लक्ष्मी आती है और खा-पीकर मौज़ करते हैं, और सारा दिन चिंता-वरीज़ करते रहते हैं, यह जीवन का ध्येय कैसे कहलाएगा? मनुष्यपन मिला वह यों ही व्यर्थ जाए इसका क्या मतलब है? तो फिर मनुष्यपन प्राप्त होने के बाद खुद के ध्येय तक पहुँचने के लिए क्या करना चाहिए? संसार के सुख चाहते हों, भौतिक सुख, तो आपके पास जो कुछ भी है उसे लोगों में बाँटो।

इस दुनिया का कानून एक ही वाक्य में समझ लो, इस जगत् के सभी धर्मों का सार यही है कि, 'यदि मनुष्य, सुख चाहता है तो दूसरे जीवों को सुख दो और दुःख चाहता हो तो दुःख दो।' जो अनुकूल हो वह देना। अब कोई कहे कि हम लोगों को सुख कैसे दें, हमारे पास पैसा नहीं है। तो सिर्फ पैसों से ही सुख दिया जा सकता है ऐसा कुछ नहीं है, उसके प्रति ऑब्लाइजिंग नेचर (उपकारी स्वभाव) रखा जा सकता है, उसकी सहायता कर सकते हैं जैसे कुछ लाना हो तो उसे लाकर दो या सलाह दे सकते हो, बहुत सारे रास्ते हैं ओब्लाइज करने के लिए।

दो प्रकार के ध्येय, सांसारिक और आत्यंतिक

दो प्रकार के ध्येय निश्चत करने चाहिए कि हम संसार में इस प्रकार रहें, ऐसे जिएँ कि किसी को कष्ट नहीं हो, किसी के लिए दुःखदायी नहीं हो। इस तरह हम अच्छे, ऊँचे सत्संगी पुरुषों, सच्चे पुरुषों के साथ रहें और कुसंग में नहीं पड़ें, ऐसा कुछ ध्येय होना चाहिए। और दूसरे ध्येय में तो प्रत्यक्ष 'ज्ञानी पुरुष' मिल जाएँ तो (उनसे आत्मज्ञान प्राप्त

करके) उनके सत्संग में ही रहें, उससे तो आपका हरएक काम हो जाएगा, सभी पज़ल सॉल्व हो जाएँगे (और मोक्ष प्राप्त होगा)।

अतः मनुष्य का अंतिम ध्येय क्या? मोक्ष में जाने का ही, यही ध्येय होना चाहिए। आपको भी मोक्ष में ही जाना है न? कब तक भटकना है? अनंत जन्मों से भटक-भटक... भटकने में कुछ भी बाकी नहीं रखा न! क्यों भटकना पड़ा? क्योंकि 'मैं कौन हूँ', वही नहीं जाना। खुद के स्वरूप को ही नहीं जाना। खुद के स्वरूप को जानना चाहिए। 'खुद कौन है' वह नहीं जानना चाहिए? इतने भटके फिर भी नहीं जाना आपने? सिर्फ पैसे कमाने के पीछे पड़े हो? मोक्ष का भी थोड़ा बहुत करना चाहिए या नहीं करना चाहिए? मनुष्य वास्तव में परमात्मा बन सकते हैं। अपना परमात्मपद प्राप्त करना वह सब से अंतिम ध्येय है।

मोक्ष, दो स्टेज पर

प्रश्नकर्ता : मोक्ष का अर्थ साधारण रूप से हम ऐसा समझते हैं कि जन्म-मरण में से मुक्ति।

दादाश्री : हाँ, वह सही है लेकिन वह अंतिम मुक्ति है, वह सेकन्डरी स्टेज है। लेकिन पहले स्टेज में पहला मोक्ष अर्थात् संसारी दुःखों का अभाव बर्तता है। संसार के दुःख में भी दुःख स्पर्श नहीं करे, उपाधि में भी समाधि रहे, वह पहला मोक्ष। और फिर जब यह देह छूटती है तब आत्यंतिक मोक्ष है लेकिन पहला मोक्ष यहीं पर होना चाहिए। मेरा मोक्ष हो ही चुका है न! संसार में रहें फिर भी संसार स्पर्श न करे, ऐसा मोक्ष हो जाना चाहिए। वह इस अक्रम विज्ञान से ऐसा हो सकता है।

2. आत्मज्ञान से शाश्वत सुख की प्राप्ति

जीवमात्र क्या ढूँढता है? आनंद ढूँढता है, लेकिन घड़ीभर भी आनंद नहीं मिल पाता। विवाह समारोह में जाएँ या नाटक में जाएँ, लेकिन वापिस फिर दुःख आ जाता है। जिस सुख के बाद दुःख आए, उसे सुख ही कैसे कहेंगे? वह तो मूर्छा का आनंद कहलाता है। सुख तो परमानेन्ट

होता है। यह तो टेम्परेरी सुख हैं और बल्कि कल्पित हैं, माना हुआ है। हर एक आत्मा क्या ढूँढता है? हमेशा के लिए सुख, शाश्वत सुख ढूँढता है। वह 'इसमें से मिलेगा, इसमें से मिलेगा। यह ले लूँ, ऐसा करूँ, बंगला बनाऊँ तो सुख आएगा, गाड़ी ले लूँ तो सुख मिलेगा', ऐसे करता रहता है। लेकिन कुछ भी नहीं मिलता। बल्कि और अधिक जंजालों में फँस जाता है। सुख खुद के अंदर ही है, आत्मा में ही है। अतः जब आत्मा प्राप्त करता है, तब (सनातन) सुख ही प्राप्त होगा।

सुख और दुःख

जगत् में सभी सुख ढूँढते हैं लेकिन सुख की परिभाषा ही तय नहीं करते। 'सुख ऐसा होना चाहिए कि जिसके बाद कभी भी दुःख न आए।' ऐसा एक भी सुख इस जगत् में हो, तो ढूँढ निकालो, जाओ। शाश्वत सुख तो खुद में-'स्व' में ही है। खुद अनंत सुख धाम है और लोग नाशवंत चीज़ों में सुख ढूँढने निकले हैं।

सनातन सुख की खोज

यदि सनातन सुख प्राप्त हो गया, उसे फिर संसार का दुःख स्पर्श न करे तो उस आत्मा की मुक्ति हो गई। सनातन सुख, वही मोक्ष है। अन्य किसी मोक्ष का हमें क्या करना है? हमें सुख चाहिए। आपको सुख अच्छा लगता है या नहीं, वह बताओ मुझे।

प्रश्नकर्ता : उसी के लिए तो प्रयत्न हैं सभी।

दादाश्री : हाँ, लेकिन सुख भी टेम्परेरी अच्छा नहीं लगता। उस सुख के बाद में दुःख आता है, इसलिए वह अच्छा नहीं लगता। सनातन सुख हो तो दुःख आए नहीं, ऐसा सुख चाहिए। यदि वैसा सुख मिले तो वही मोक्ष है। मोक्ष का अर्थ क्या है? तो कहते हैं कि संसारी दुःखों का अभाव होना, वही मोक्ष! वर्ना दुःख का अभाव तो किसी को नहीं रहता!

एक तो, यह बाहर का विज्ञान, उसे तो इस दुनिया के साइन्टिस्ट स्टडी करते ही रहते हैं न! और दूसरा, ये आंतर विज्ञान कहलाता है,

जो खुद को सनातन सुख की तरफ ले जाता है। अत: खुद के सनातन सुख की प्राप्ति करवाए वह आत्मविज्ञान कहलाता है और ये टेम्परेरी एडजस्टमेन्ट वाला सुख दिलवाए, वह सारा बाह्य विज्ञान कहलाता है। बाह्य विज्ञान तो अंत में विनाशी है और विनाश करने वाला है और यह अक्रम विज्ञान तो सनातन है और सनातन करने वाला है।

3. I and My are seperate

'ज्ञानी' ही मौलिक स्पष्टीकरण देते हैं

'I' भगवान है और 'My' माया है। 'My' is relative to 'I'. 'I' is real. आत्मा के गुणों का इस 'I' में आरोपण करो, तब भी आपकी शक्तियाँ बहुत बढ़ जाएँगी। मूल आत्मा एकदम ज्ञानी के बिना नहीं मिल सकता। परंतु ये 'I' and 'My' बिल्कुल अलग ही है। ऐसा सभी को, फ़ॉरेन के लोगों को भी यदि समझ में आ जाए तो उनकी परेशानियाँ बहुत कम हो जाएँगी। यह साइन्स है। अक्रम विज्ञान की यह आध्यात्मिक research का बिल्कुल नया ही तरीका है। 'I' वह स्वायत्त भाव है और 'My' वह मालिकीभाव है।

सेपरेट, 'I' एन्ड 'My'

आपसे कहा जाए कि, Separate 'I' and 'My' with Separator, तो आप 'I' और 'My' को सेपरेट (अलग) कर सकेंगे क्या? 'I' एन्ड 'My' को सेपरेट करना चाहिए या नहीं? जगत् में कभी न कभी जानना तो पड़ेगा न! सेपरेट 'I' एन्ड 'My'। जैसे दूध के लिए सेपरेटर होता है न, उसमें से मलाई को अलग करते हैं न? ऐसे ही यह अलग करना है।

आपके पास 'My' जैसी कोई चीज़ है? 'I' अकेले हो या 'My' साथ में है?

प्रश्नकर्ता : 'My' साथ में है न!

दादाश्री : क्या क्या 'My' है आपके पास?

प्रश्नकर्ता : मेरा घर और घर की सभी चीजें।

दादाश्री : सभी आपकी कहलाए? और वाइफ किसकी कहलाए?

प्रश्नकर्ता : वह भी मेरी।

दादाश्री : और बच्चे किसके?

प्रश्नकर्ता : वे भी मेरे।

दादाश्री : और यह घड़ी किसकी?

प्रश्नकर्ता : वह भी मेरी।

दादाश्री : और ये हाथ किसके?

प्रश्नकर्ता : हाथ भी मेरे हैं।

दादाश्री : फिर 'मेरा सिर, मेरा शरीर, मेरे पैर, मेरे कान, मेरी आँखें' ऐसा कहेंगे। इस शरीर की सभी वस्तुओं को 'मेरा' कहते हैं, तब 'मेरा' कहने वाले 'आप' कौन हैं? यह नहीं सोचा? 'My' नेम इज़ 'चंदूभाई' (चंदूभाई की जगह वाचक को अपना नाम समझना है।) ऐसा बोलें और फिर कहें 'मैं चंदूभाई हूँ', इसमें कोई विरोधाभास नहीं लगता?

प्रश्नकर्ता : लगता है।

दादाश्री : आप चंदूभाई हैं, अब इसमें 'I' एन्ड 'My' दो हैं। यह 'I' एन्ड 'My' की दो रेल्वेलाइन अलग ही होती हैं। पैरेलल ही रहती हैं, कभी एकाकार होती ही नहीं हैं। फिर भी आप एकाकार मानते हैं, इसे समझकर इसमें से 'My' को सेपरेट कर दीजिए। आपमें जो 'My' है, उसे एक ओर रखिये। 'My' हार्ट, तो उसे एक ओर रखें। इस शरीर में से और क्या-क्या सेपरेट करना होगा?

प्रश्नकर्ता : पैर, इन्द्रियाँ।

दादाश्री : हाँ, सभी। पाँच इन्द्रियाँ, पाँच कर्मेन्द्रियाँ मन-बुद्धि-चित्त-अहंकार सभी।

और 'My इगोइज़म' बोलते हैं या 'I एम इगोइज़म' बोलते हैं?'

प्रश्नकर्ता : 'My इगोइज़म'।

दादाश्री : 'My इगोइज़म' कहेंगे तो उसे अलग कर सकेंगे। लेकिन उसके आगे जो है, उसमें आपका हिस्सा क्या है, यह आप नहीं जानते। इसलिए फिर पूर्ण रूप से सेपरेशन नहीं हो पाता। आप, अपना कुछ हद तक ही जान पाएँगे। आप स्थूल वस्तु ही जानते हैं, सूक्ष्म की पहचान ही नहीं हैं। सूक्ष्म को अलग करना, फिर सूक्ष्मतर को अलग करना, फिर सूक्ष्मतम को अलग करना तो ज्ञानी पुरुष का ही काम है।

लेकिन एक-एक स्पेयरपार्ट्स सब अलग करते जाएँ तो 'I' और My, दोनों अलग हो सकते हैं न? 'I' और 'My' दोनों अलग करते-करते आखिर क्या बचेगा? 'My' को एक ओर रखें तो आखिर क्या बचा?

प्रश्नकर्ता : 'I'।

दादाश्री : वह 'I' ही आप हैं! बस, उसी 'I' को रीयलाइज़ करना है।

वहाँ हमारी (ज्ञानी की) ज़रूरत पड़ेगी। मैं आपमें वह सभी अलग कर दूँगा। फिर आपको 'मैं शुद्धात्मा हूँ' ऐसा अनुभव रहेगा। अनुभव होना चाहिए और साथ-साथ दिव्यचक्षु भी देता हूँ ताकि आत्मवत् सर्वभूतेषु (सभी में आत्मा) दिखे।

4. 'मैं' की पहचान कैसे?

जप-तप, व्रत और नियम

प्रश्नकर्ता : व्रत, तप, नियम ज़रूरी हैं या नहीं?

दादाश्री : ऐसा है, कि केमिस्ट के यहाँ जितनी दवाइयाँ हैं वे सभी ज़रूरी हैं, लेकिन वह लोगों के लिए ज़रूरी हैं, आपको तो जो दवाइयाँ ज़रूरी हैं उतनी ही बोतल आपको ले जानी हैं। वैसे ही व्रत, तप, नियम, इन सभी की ज़रूरत है। इस जगत् में कुछ भी गलत नहीं है। जप, तप कुछ भी गलत नहीं है। परंतु हर एक की दृष्टि से, हर एक की अपेक्षा से सत्य है।

प्रश्नकर्ता : तप और क्रिया से मुक्ति मिलती है क्या?

दादाश्री : तप और क्रिया से फल मिलते हैं, मुक्ति नहीं मिलती। नीम बोएँ तो कड़वे फल मिलते हैं और आम बोएँ तो मीठे फल मिलते हैं। तुझे जैसे फल चाहिए तू वैसे बीज बोना। मोक्ष प्राप्ति का तप तो अलग ही होता है, अंतरतप होता है। और लोग कुछ ऐसा समझे कि वे बाहर का तप लेकर बैठे गए। ये बाहर जितने तप दिखते हैं, पर वे ऐसे तप नहीं, उन सबका फल तो पुण्य मिलेगा। मोक्ष में जाने के लिए तो अंतरतप चाहिए, अदीठ तप।

प्रश्नकर्ता : मंत्रजाप से मोक्ष मिलता है या ज्ञानमार्ग से मोक्ष मिलता है?

दादाश्री : मंत्रजाप आपको संसार में शांति देता है। मन को शांत करे, वह मंत्र, उससे भौतिक सुख मिलते हैं और मोक्ष तो ज्ञानमार्ग के बिना नहीं हो सकता। अज्ञान से बंधन है और ज्ञान से मुक्ति है। इस जगत् में जो ज्ञान चल रहा है, वह इन्द्रिय ज्ञान है। वह भ्रांति है और अतिन्द्रिय ज्ञान ही दरअसल ज्ञान है।

जिसे खुद के स्वरूप की पहचान करके मोक्ष में जाना हो उसे क्रियाओं की ज़रूरत नहीं है। जिसे भौतिक सुखों की आवश्यकता हो उसे क्रियाओं की ज़रूरत है। जिसे मोक्ष में जाना हो उसे तो ज्ञान और ज्ञानी की आज्ञा सिर्फ दो ही चीज़ों की ज़रूरत है।

ज्ञानी ही पहचान कराएँ 'मैं' की!

प्रश्नकर्ता : आपने कहा कि आप अपने आप को पहचानो तो अपने आपको पहचानने के लिए क्या करें?

दादाश्री : वह तो मेरे पास आओ। आप कह दो कि हमें अपने आपको पहचानना है, तब मैं आपकी पहचान करवा दूँ।

प्रश्नकर्ता : 'मैं कौन हूँ' यह जानने की जो बात है, वह इस संसार में रहकर कैसे संभव हो सकती है?

दादाश्री : तब कहाँ रहकर जान सकते हैं उसे? संसार के अलावा और कोई जगह है कि जहाँ रह सकें? इस जगत् में सभी संसारी ही हैं और सभी संसार में ही रहते हैं। यहाँ 'मैं कौन हूँ' यह जानने को मिले ऐसा है। 'आप कौन हैं' यह समझने का विज्ञान ही है यहाँ पर। यहाँ आना, हम आपको पहचान करवा देंगे।

मोक्ष का सरल उपाय

जो मुक्त हो चुके हों वहाँ पर जाकर हम कहें कि 'साहब, मेरी मुक्ति कर दीजिए! वही अंतिम उपाय है, सबसे अच्छा उपाय। 'खुद कौन है' वह ज्ञान नक्की हो जाए तो उसे मोक्ष गति मिलेगी। और यदि आत्मज्ञानी नहीं मिलें तो (तब तक) आत्मज्ञानी की पुस्तकें पढ़नी चाहिए।

आत्मा साइन्टिफिक वस्तु है। वह पुस्तकों से प्राप्त हो ऐसी वस्तु नहीं है। वह अपने गुणधर्मों सहित है, चेतन है और वही परमात्मा है। उसकी पहचान हो गई यानी हो चुका। कल्याण हो गया और फिर वह आप खुद ही हो!

मोक्ष मार्ग में तप-त्याग कुछ भी नहीं करना होता। केवल यदि ज्ञानी पुरुष मिल जाएँ तो ज्ञानी की आज्ञा ही धर्म और आज्ञा ही तप और यही ज्ञान, दर्शन, चारित्र और तप है, जिसका प्रत्यक्ष फल मोक्ष है।

'ज्ञानी पुरुष' मिलें तभी मोक्ष का मार्ग आसान और सरल हो जाता है। खिचड़ी बनाने से भी आसान हो जाता है।

5. 'मैं' की पहचान - ज्ञानी पुरुष से?

आवश्यकता गुरु की या ज्ञानी की?

प्रश्नकर्ता : दादाजी के मिलने से पहले किसी को गुरु माना हो तो उसे क्या करना चाहिए?

दादाश्री : वहाँ नहीं जाना हो तो, जाना ही है ऐसा आवश्यक नहीं है। आपको जाना हो तो जाना और नहीं जाना हो तो मत जाना। उन्हें दुःख

न हो, इसलिए भी जाना चाहिए। आपको विनय रखना चाहिए। यहाँ पर 'आत्मज्ञान' लेते समय मुझसे कोई पूछे कि, 'अब मैं गुरु को छोड़ दूँ?' तब मैं कहूँगा कि, 'मत छोड़ना। अरे, उन्हीं गुरु के प्रताप से तो यहाँ तक पहुँच पाए हो।' संसार का ज्ञान भी गुरु बिना नहीं होता और मोक्ष का ज्ञान भी गुरु बिना नहीं होता। व्यवहार के गुरु 'व्यवहार' के लिए हैं और ज्ञानी पुरुष 'निश्चय' के लिए हैं। व्यवहार रिलेटिव है और निश्चय रियल है। रिलेटिव के लिए गुरु चाहिए और रीयल के लिए ज्ञानी पुरुष चाहिए।

प्रश्नकर्ता : ऐसा भी कहते हैं न कि गुरु के बिना ज्ञान किस तरह मिलेगा?

दादाश्री : गुरु तो रास्ता दिखाते हैं, मार्ग दिखाते हैं और 'ज्ञानी पुरुष' ज्ञान देते हैं। 'ज्ञानी पुरुष' अर्थात् जिन्हें जानने का कुछ भी बाकी नहीं रहा, खुद तद्स्वरूप में बैठे हैं। अर्थात् 'ज्ञानी पुरुष' आपको सबकुछ दे देते हैं और गुरु तो संसार में आपको रास्ता दिखाते हैं, उनके कहे अनुसार करें तो संसार में सुखी हो जाते हैं। आधि, व्याधि और *उपाधि* में समाधि दिलवाएँ वे 'ज्ञानी पुरुष'।

प्रश्नकर्ता : ज्ञान गुरु से मिलता है, लेकिन जिस गुरु ने खुद आत्मसाक्षात्कार कर लिया हो, उनके ही हाथों ज्ञान मिल सकता है न?

दादाश्री : वे 'ज्ञानी पुरुष' होने चाहिए और फिर सिर्फ आत्मसाक्षात्कार करवाने से कुछ नहीं होगा। जब 'ज्ञानी पुरुष', 'यह जगत् किस तरह से चल रहा है? खुद कौन है? यह कौन है?' ऐसे सभी स्पष्टीकरण दें, तब काम पूरा हो जाए, ऐसा है। वर्ना, पुस्तकों के पीछे पड़ते रहते हैं, लेकिन पुस्तकें तो 'हेल्पर' हैं। वे मुख्य चीज़ नहीं हैं। वे साधारण कारण हैं, वे असाधारण कारण नहीं हैं। असाधारण कारण कौन सा है? 'ज्ञानी पुरुष'!

अर्पण विधि कौन करवा सकते हैं?

प्रश्नकर्ता : ज्ञान लेने से पहले जो अर्पण विधि करवाते हैं न,

उसमें यदि पहले किसी गुरु के समक्ष अर्पण विधि कर ली हो, और फिर यहाँ वापस अर्पण विधि करें तो फिर वह ठीक नहीं कहलाएगा न?

दादाश्री : अर्पणविधि तो गुरु करवाते ही नहीं हैं। यहाँ तो क्या-क्या अर्पण करना है? आत्मा के अलावा सभीकुछ। यानी सबकुछ अर्पण तो कोई करता ही नहीं है न! अर्पण होता भी नहीं है और कोई गुरु ऐसा कहते भी नहीं हैं। वे तो आपको मार्ग दिखाते हैं, वे गाईड के रूप में काम करते हैं। हम गुरु नहीं है, हम तो ज्ञानी पुरुष हैं और ये तो भगवान के दर्शन करने हैं। मुझे अर्पण नहीं करना है, भगवान को अर्पण करना है।

आत्मानुभूति किस तरह से होती है?

प्रश्नकर्ता : 'मैं आत्मा हूँ' उसका ज्ञान किस तरह से होता है? खुद अनुभूति किस तरह से कर सकता है?

दादाश्री : यही अनुभूति करवाने के लिए तो 'हम' बैठे हैं। यहाँ पर जब हम 'ज्ञान' देते हैं, तब 'आत्मा' और 'अनात्मा' दोनों को जुदा कर देते हैं और फिर आपको घर भेज देते हैं।

ज्ञान की प्राप्ति स्वयं से नहीं हो सकती। यदि खुद से हो पाता तो ये साधु सन्यासी सभी करके बैठ चुके होते। लेकिन वहाँ तो ज्ञानी पुरुष का ही काम हैं। ज्ञानी पुरुष उसके निमित्त हैं।

जैसे इन दवाओं के लिए डॉक्टर की ज़रूरत पड़ती है या नहीं पड़ती? या फिर आप खुद घर पर दवाई बना लेते हो? वहाँ कैसे जाग्रत रहते हो कि कोई भूल हो जाएगी तो हम मर जाएँगे! और आत्मा के संबंध में तो खुद ही मिक्स्चर बना लेता है! शास्त्र खुद की अक्ल से, गुरु द्वारा दी गई समझ के बिना पढ़े और मिक्स्चर बनाकर पी गए। इसे भगवान ने स्वच्छंद कहा है। इस स्वच्छंद से तो अनंत जन्मों का मरण हो गया! वह तो एक ही जन्म का मरण था!!!

अक्रम ज्ञान से नकद मोक्ष

'ज्ञानी पुरुष' अभी प्रत्यक्ष हैं तो मार्ग भी मिलेगा; वर्ना ये लोग

भी बहुत सोचते हैं, परंतु मार्ग नहीं मिलता और उल्टे रास्ते चले जाते हैं। 'ज्ञानी पुरुष' तो शायद ही कभी, एकाध प्रकट होते हैं और उनके पास से ज्ञान मिलने से आत्मानुभव होता है। मोक्ष तो यहाँ नकद होना चाहिए। यहीं पर देह सहित मोक्ष बरतना चाहिए। इस अक्रम ज्ञान से नकद मोक्ष मिल जाता है और अनुभव भी हो जाए, ऐसा है!

ज्ञानी ही कराए आत्मा-अनात्मा का भेद

इस अँगूठी में सोना और ताँबा दोनों मिले हुए हों, इसे हम गाँव में घर ले जाकर किसी से कहें कि, 'भैया, अलग-अलग कर दीजिए न!' तो क्या सब लोग कर देंगे? कौन कर पाएगा?

प्रश्नकर्ता : सोनी ही कर पाएगा।

दादाश्री : जिसका यह काम है, जो इसमें एक्सपर्ट है, वह सोना और ताँबा दोनों अलग कर देगा। सौ टच सोना अलग कर देगा, क्योंकि वह दोनों के गुणधर्म जानता है कि सोने के गुणधर्म ये हैं और ताँबे के गुणधर्म ऐसे हैं। उसी प्रकार ज्ञानी पुरुष आत्मा के गुणधर्म जानते हैं और अनात्मा के भी गुणधर्म जानते हैं।

जैसे अँगूठी में सोने और ताँबे का 'मिक्स्चर' हो गया होता है इसलिए उसे अलग किया जा सकता है। सोना और ताँबा दोनों कम्पाउन्ड स्वरूप (रूप) हो जाते तो उन्हें अलग नहीं किया जा सकता। क्योंकि इससे गुणधर्म अलग ही प्रकार के हो जाते। इसी प्रकार जीव के अंदर चेतन और अचेतन का मिक्स्चर है, वे कम्पाउन्ड स्वरूप नहीं हुए हैं। इसलिए फिर से स्वभाव को प्राप्त कर सकते हैं। कम्पाउन्ड बन गया होता तो पता ही नहीं चलता। चेतन के गुणधर्मों का भी पता नहीं चलता और अचेतन के गुणधर्मों का भी पता नहीं चलता और तीसरा ही गुणधर्म उत्पन्न हो जाता। लेकिन ऐसा नहीं है। वह तो केवल मिक्स्चर हुआ है।

ज्ञानी पुरुष, वर्ल्ड के ग्रेटेस्ट साइन्टिस्ट

वह तो 'ज्ञानी पुरुष' जो कि वर्ल्ड के ग्रेटेस्ट साइन्टिस्ट हैं, वे ही

जानते हैं, और वे ही अलग कर सकते हैं। वे आत्मा-अनात्मा का विभाजन कर देते हैं इतना ही नहीं, लेकिन आपके पापों को जलाकर भस्मीभूत कर देते हैं, दिव्यचक्षु देते हैं और 'यह जगत् क्या है, किस तरह से चल रहा है, कौन चला रहा है', वगैरह सभी स्पष्ट कर देते हैं, तब जाकर अपना काम पूर्ण होता है।

करोड़ों जन्मों के पुण्य जागें तब 'ज्ञानी' के दर्शन होते हैं, नहीं तो दर्शन ही कहाँ से हो पाएँगे? ज्ञान की प्राप्ति करने के लिए 'ज्ञानी' को पहचान! और कोई रास्ता नहीं है। ढूँढने वाले को मिल ही जाते हैं!

6. 'ज्ञानी पुरुष कौन?'

संत और ज्ञानी की व्याख्या

प्रश्नकर्ता : ये जो सभी संत हो चुके हैं, उनमें और ज्ञानी में कितना अंतर है?

दादाश्री : जो कमज़ोरी छुड़वाते हैं और अच्छाइयाँ पकड़ाते हैं, जो गलत काम छुड़वाएँ और अच्छा करना पकड़वाएँ वे संत कहलाते हैं। जो पाप कर्म से बचाएँ वे संत हैं लेकिन जो पाप और पुण्य दोनों से बचाएँ वे ज्ञानी पुरुष कहलाते हैं। संतपुरुष सही रास्ते पर ले जाते हैं और ज्ञानी पुरुष मुक्ति दिलवाते हैं। ज्ञानी पुरुष तो अंतिम स्टेशन कहलाते हैं, वहाँ तो अपना कल्याण ही कर देते हैं। सच्चे ज्ञानी कौन? कि जिन्हें अहंकार और ममता दोनों न हों।

जिन्हें आत्मा का संपूर्ण अनुभव हो चुका है, वे 'ज्ञानी पुरुष' कहलाते हैं। वे पूरे ब्रह्मांड का वर्णन कर सकते हैं। सभी जवाब दे सकते हैं। ज्ञानी पुरुष अर्थात् वर्ल्ड का आश्चर्य कहलाते हैं। ज्ञानी पुरुष अर्थात् प्रकट दीया कहलाते हैं।

ज्ञानी पुरुष की पहचान

प्रश्नकर्ता : ज्ञानी पुरुष को कैसे पहचानें?

दादाश्री : ज्ञानी पुरुष तो बिना कुछ किए ही पहचाने जाएँ ऐसे होते हैं। उनकी सुगंध ही, पहचानी जाए ऐसी होती है। उनका वातावरण कुछ और ही होता है! उनकी वाणी ही अलग होती है! उनके शब्दों से ही पता चल जाता है। अरे, उनकी आँखें देखते ही मालूम हो जाता है। ज्ञानी के पास बहुत विश्वसनीयता होती है, जबरदस्त विश्वसनीयता! और उनका हर शब्द शास्त्ररूप होता है, यदि समझ में आए तो। उनके वाणी-वर्तन और विनय मनोहर होते हैं, मन का हरण करने वाले होते हैं। ऐसे बहुत सारे लक्षण होते हैं।

ज्ञानी पुरुष अबुध होते हैं। जो आत्मा के ज्ञानी होते हैं न, वे तो परम सुखी होते हैं और उन्हें किंचित्‌मात्र दुख नहीं होता। इसलिए वहाँ पर अपना कल्याण होता है। जहाँ स्वयं, खुद का कल्याण करके बैठे हों, वे ही अपना कल्याण कर सकते हैं। जो खुद तैर सके वे ही हमें किनारे पहुँचाएँगे। वहाँ पर लाखों लोग तैरकर पार निकल जाते हैं।

श्रीमद् राजचंद्रजी ने क्या कहा है कि, 'ज्ञानी पुरुष कौन कि जिन्हें किंचित् मात्र भी किसी भी प्रकार की स्पृहा नहीं है, दुनिया में किसी प्रकार की जिन्हें भीख नहीं है, उपदेश देने की भी जिन्हें भीख नहीं है, शिष्यों की भी भीख नहीं है, किसी को सुधारने की भी भीख नहीं है, किसी प्रकार का गर्व नहीं है, गारवता नहीं है, *पोतापणुं* (मेरापन) नहीं है।

7. ज्ञानी पुरुष - ए. एम. पटेल (दादाश्री)

'दादा भगवान', जो चौदह लोक के नाथ हैं। वे आपमें भी हैं, लेकिन आपमें प्रकट नहीं हुए हैं। आपमें अव्यक्त रूप से हैं और यहाँ व्यक्त हुए हैं। जो व्यक्त हुए हैं, वे फल देते हैं। एक बार भी उनका नाम लें तो भी काम निकल जाए, ऐसा है। लेकिन पहचान कर बोलने से तो कल्याण हो जाएगा और सांसारिक चीज़ों की यदि अड़चन हो तो वह भी दूर हो जाएगी।

ये जो दिखाई देते हैं, वे 'दादा भगवान' नहीं हैं। आप जो दिखाई देते हैं, उन्हें ही 'दादा भगवान' समझते होंगे, है न? लेकिन यह दिखाई

देने वाले तो भादरण के पटेल हैं। मैं 'ज्ञानी पुरुष' हूँ और जो भीतर प्रकट हुए हैं, वे दादा भगवान हैं। मैं खुद भगवान नहीं हूँ। मेरे भीतर प्रकट हुए दादा भगवान को मैं भी नमस्कार करता हूँ। हमारा दादा भगवान के साथ जुदापन (भिन्नता) का ही व्यवहार है। लेकिन लोग ऐसा समझते हैं कि ये खुद ही दादा भगवान हैं। नहीं, खुद दादा भगवान कैसे हो सकते हैं? ये तो पटेल हैं, भादरण के।

(यह ज्ञान लेने के बाद) दादाजी की आज्ञा का पालन करना यानी वह 'ए.एम.पटेल' की आज्ञा नहीं है। खुद 'दादा भगवान' की, जो चौदह लोक के नाथ हैं, उनकी आज्ञा है। उसकी गारन्टी देता हूँ। यह तो मेरे माध्यम से यह सब बातें निकली हैं। इसलिए आपको उस आज्ञा का पालन करना है। 'मेरी आज्ञा' नहीं है, यह दादा भगवान की आज्ञा है। मैं भी उन भगवान की आज्ञा में रहता हूँ न!

8. क्रमिक मार्ग- अक्रम मार्ग

मोक्ष में जाने के दो मार्ग हैं : एक 'क्रमिक मार्ग' और दूसरा 'अक्रम' मार्ग। क्रमिक अर्थात् सीढ़ी दर सीढ़ी चढ़ना। जैसे-जैसे क्रमिक में परिग्रह कम करते जाओगे, वैसे-वैसे वह आपको मोक्ष में पहुँचाएगा, वह भी बहुत काल के बाद और यह अक्रम विज्ञान यानी क्या? सीढ़ीयाँ नहीं चढ़नी है, लिफ्ट में बैठ जाना है और बारहवीं मंज़िल पर पहुँच जाना है, ऐसा यह लिफ्ट मार्ग निकला है। सीधे ही लिफ्ट में बैठकर, बीवी-बच्चों के साथ बेटे-बेटियों की शादी करवाकर, सभीकुछ करके मोक्ष में जाना। ये सभी करते हुए भी आपका मोक्ष नहीं जाएगा। ऐसा अक्रम मार्ग, अपवाद मार्ग भी कहलाता है। वह हर दस लाख वर्ष में प्रकट होता है। तो इस लिफ्ट मार्ग में जो बैठ गया उसका कल्याण हो गया। मैं तो निमित्त हूँ। इस लिफ्ट में जो बैठ गए, उनका हल आ जाएगा न! हल तो निकालना ही होगा न? हम मोक्ष में जाने वाले ही हैं, उस लिफ्ट में बैठे होने का प्रमाण तो होना चाहिए या नहीं होना चाहिए? उसका प्रमाण यानी क्रोध-मान-माया-लोभ नहीं हों, आर्तध्यान-रौद्रध्यान नहीं हों। तो पूरा काम हो गया न?

अक्रम सरलता से कराए आत्मानुभूति

क्रमिक मार्ग में तो कितना अधिक प्रयत्न करने पर आत्मा का ख्याल आता है, वह भी बहुत अस्पष्ट और *लक्ष* (जागृति) तो बैठता ही नहीं। उसे *लक्ष* में रखना पड़ता है कि आत्मा ऐसा है। और अक्रम मार्ग में तो सीधा आत्मानुभव ही हो जाता है। सिर दु:खे, भूख लगे, पेरालिसीस हो, बाहर भले ही कितनी भी मुश्किलें आएँ, लेकिन अंदर की *शाता* (सुख परिणाम) नहीं जाती, उसे आत्मानुभव कहा है। आत्मानुभव तो दु:ख को भी सुख में बदल देता है और मिथ्यात्वी को तो सुख में भी दु:ख लगता है।

यह अक्रम विज्ञान है इसलिए इतनी जल्दी समकित हो जाता है, यह तो बहुत ही उच्च प्रकार का विज्ञान है। आत्मा और अनात्मा के बीच यानी आपकी और पराई चीज़, इस तरह दोनों का विभाजन कर देते हैं, कि यह आपका भाग है और यह आपका भाग नहीं है, दोनों के बीच में विदिन वन अवर (मात्र एक ही घंटे में) लाइन ऑफ डिमार्केशन (भेदरेखा) डाल देता हूँ। आप खुद माथापच्ची करने जाओगे तो लाख जन्मों में भी ठिकाना नहीं पड़ेगा।

'मुझे' मिला वही अधिकारी

प्रश्नकर्ता : यह मार्ग इतना आसान है, तो फिर कोई अधिकार (पात्रता) जैसा देखना ही नहीं? हर किसी के लिए यह संभव है?

दादाश्री : लोग मुझे पूछते है कि, क्या मैं अधिकारी (पात्र) हूँ? तब मैंने कहा, 'मुझे मिला, इसलिए तू अधिकारी।' यह मिलना, तो सायन्टिफिक सरकमस्टेन्शियल एविडन्स है इसके पीछे। इसलिए हमें जो कोई व्यक्ति मिला, उसे अधिकारी समझा जाता है। वह किस आधार पर मिलता है? वह अधिकारी है, इसी वजह से तो मुझसे मिलता है। मुझसे मिलने पर भी यदि उसे प्राप्ति नहीं होती, तो फिर उसका अंतराय कर्म बाधक है।

क्रम में 'करना है' और अक्रम में...

एक भाई ने एक बार प्रश्न किया कि क्रम और अक्रम में फर्क क्या है? तब मैंने बताया कि, क्रम यानी जैसा कि सभी कहते हैं कि यह उल्टा (गलत) छोड़ो और सीधा (सही) करो। सभी यही कहते रहते हैं, उसका नाम क्रमिक मार्ग। क्रम यानी सब छोड़ने को कहें, यह कपट-लोभ छोड़ो और अच्छा करो। यही आपने देखा न आज तक? और यह अक्रम यानी, करना नहीं, करोमि-करोसि-करोति नहीं!

अक्रम विज्ञान तो बहुत बड़ा आश्चर्य है। यहाँ 'आत्मज्ञान' लेने के बाद दूसरे दिन से व्यक्ति में परिवर्तन हो जाता है। यह सुनते ही लोगों को यह विज्ञान स्वीकार हो जाता है और यहाँ खिंचे चले आते हैं।

अक्रम में मूल रूप से अंदर से ही शुरूआत होती है। क्रमिक मार्ग में शुद्धता भी अंदर से नहीं हो सकती, उसका कारण यह है कि केपेसिटी नहीं है, ऐसी मशीनरी नहीं है इसलिए बाहर का तरीका अपनाया है लेकिन वह बाहर का तरीका अंदर कब पहुँचेगा? मन-वचन-काया की एकता होगी, तब अंदर पहुँचेगा और फिर अंदर शुरूआत होगी। मूलतः (आजकल) तो मन-वचन-काया की एकता ही नहीं रही।

एकात्मयोग टूटने से अपवाद रूप से प्रकट हुआ अक्रम

जगत् ने स्टेप बाय स्टेप, क्रमशः आगे बढ़ने का मोक्ष मार्ग ढूँढ निकाला है लेकिन वह तभी तक सही था जब तक कि जो मन में हो, वैसा ही वाणी में बोलें और वैसा ही वर्तन में हो, तभी तक वह मोक्षमार्ग चलता रहता है, वर्ना यह मार्ग बंद हो जाता है। तो इस काल में मन-वचन-काया की एकता टूट गई है इसलिए क्रमिक मार्ग फ्रेक्चर हो गया है। इसलिए कहता हूँ न कि इस क्रमिक मार्ग का बेज़मेन्ट सड़ चुका है, इसलिए यह अक्रम निकला है। यहाँ पर सबकुछ अलाउ हो जाता है, तू जैसा हो वैसा, तू मुझे यहाँ पर मिला न तो बस! यानी हमें और दूसरी बाहर की झंझट ही नहीं करनी।

'ज्ञानी' कृपा से 'प्राप्ति'

प्रश्नकर्ता : आपने जो अक्रम मार्ग कहा, वह आपके जैसे 'ज्ञानी' के लिए ठीक है, सरल है। लेकिन हमारे जैसे सामान्य, संसार में रहने वाले, काम करने वाले लोगों के लिए वह मुश्किल है। तो उसके लिए क्या उपाय है?

दादाश्री : 'ज्ञानी पुरुष' के यहाँ भगवान प्रकट हो चुके होते हैं, चौदह लोक के नाथ प्रकट हो चुके होते हैं, वैसे 'ज्ञानी पुरुष' मिल जाएँ तो क्या बाकी रहेगा? आपकी शक्ति से नहीं करना है, उनकी कृपा से होने वाला है। कृपा से सबकुछ ही बदल जाता है। इसलिए यहाँ तो जो आप माँगो वह सारा ही हिसाब पूरा होता है। आपको कुछ भी नहीं करना है। आपको तो 'ज्ञानी पुरुष' की आज्ञा में ही रहना है। यह तो 'अक्रम विज्ञान' है। यानी प्रत्यक्ष भगवान के पास से काम निकाल लेना है और वह आपको प्रतिक्षण (हाज़िर) रहता है, घंटे-दो घंटे ही नहीं।

प्रश्नकर्ता : यानी उन्हें सब सौंप दिया हो, तो वे ही सब करते हैं?

दादाश्री : वे ही सब करेंगे, आपको कुछ भी नहीं करना है। करने से तो कर्म बँधते हैं। आपको तो सिर्फ लिफ्ट में बैठना है। लिफ्ट में (बैठकर) पाँच आज्ञाएँ पालनी हैं। लिफ्ट में बैठने के बाद भीतर उछलकूद मत करना, हाथ बाहर मत निकालना, इतना ही आपको करना है। कभी ही ऐसा मार्ग निकलता है, वह पुण्यशालियों के लिए ही है। वर्ल्ड का यह ग्यारहवाँ आश्चर्य कहलाता है! जिसे टिकिट मिल गई, उसका काम हो गया।

अक्रम मार्ग जारी है

इसमें मेरा हेतु इतना ही है कि 'मैंने जो सुख प्राप्त किया, वह सुख आप भी प्राप्त करो।' अर्थात् ऐसा जो यह विज्ञान प्रकट हुआ है, वह यों ही दब जाने वाला नहीं है। हम हमारे पीछे ज्ञानियों की वंशावली छोड़ जाएँगे। हमारे उत्तराधिकारी छोड़ जाएँगे और उसके बाद ज्ञानियों की लिंक चालू रहेगी। इसलिए सजीवन मूर्ति खोजना। उसके बगैर हल निकलने वाला नहीं है।

मैं तो कुछ लोगों को अपने हाथों सिद्धि प्रदान करने वाला हूँ। पीछे कोई चाहिए कि नहीं चाहिए? पीछे वालों लोगों को मार्ग तो चाहिए न?

9. ज्ञानविधि क्या है?

प्रश्नकर्ता : आपकी ज्ञानविधि क्या है?

दादाश्री : ज्ञानविधि तो पुद्गल (अनात्मा) और आत्मा का सेपरेशन (अलग) करती है! शुद्ध चेतन और पुद्गल दोनों का सेपरेशन।

प्रश्नकर्ता : यह सिद्धांत तो ठीक है लेकिन उसकी पद्धति क्या है, वह जानना है।

दादाश्री : इसमें लेने-देने जैसा कुछ होता नहीं है, केवल यहाँ बैठकर यह जैसा है वैसा बोलने की जरूरत है ('मैं कौन हूँ' उसकी पहचान करवाने का, दो घंटे का ज्ञान प्रयोग होता है। उसमें अड़तालीस मिनिट आत्मा-अनात्मा का भेद करने वाले भेदविज्ञान के वाक्य बुलवाए जाते हैं। जो सभी को सामूहिक में बोलने होते हैं। उसके बाद एक घंटे में पाँच आज्ञाएँ उदाहरण देकर विस्तारपूर्वक समझाई जाती हैं, कि अब बाकी का जीवन कैसे व्यतीत करना कि जिससे नए कर्म नहीं बँधें और पुराने कर्म पूर्णतया खत्म हो जाएँ, साथ ही 'मैं शुद्धात्मा हूँ' का लक्ष हमेशा रहा करे!)

10. ज्ञानविधि में क्या होता है?

हम ज्ञान देते हैं, उससे कर्म भस्मीभूत हो जाते हैं और उस समय कई आवरण टूट जाते हैं। तब भगवान की कृपा होने के साथ ही वह खुद जाग्रत हो जाता है। जागने के पश्चात वह जागृति जाती नहीं है। फिर निरंतर जाग्रत रह सकते हैं। यानी निरंतर प्रतीति रहेगी ही।आत्मा का अनुभव हुआ यानी देहाध्यास छूट गया। देहाध्यास छूट गया यानी कर्म बँधने बंद हो गए। पहले अज्ञान से मुक्ति हो जाती है। फिर एक दो जन्मों में अंतिम मुक्ति मिल जाती है।

कर्म भस्मीभूत होते हैं ज्ञानाग्नि से

जिस दिन यह 'ज्ञान' देते हैं उस दिन क्या होता है? ज्ञानाग्नि से उसके जो कर्म हैं, वे भस्मीभूत हो जाते हैं। दो प्रकार के कर्म भस्मीभूत हो जाते हैं और एक प्रकार के कर्म बाकी रहते हैं। जो कर्म भाप जैसे हैं, उनका नाश हो जाता है। और जो कर्म पानी जैसे हैं, उनका भी नाश हो जाता है लेकिन जो कर्म बर्फ जैसे हैं, उनका नाश नहीं होता। क्योंकि वे जमे हुए हैं। जो कर्म फल देने के लिए तैयार हो गया है, वह फिर छोड़ता नहीं है। लेकिन पानी और भाप स्वरूप जो कर्म हैं, उन्हें ज्ञानाग्नि खत्म कर देती है। इसलिए ज्ञान पाते ही लोग एकदम हल्के हो जाते हैं, उनकी जागृति एकदम बढ़ जाती है। क्योंकि जब तक कर्म भस्मीभूत नहीं होते, तब तक मनुष्य की जागृति बढ़ती ही नहीं। जो बर्फ स्वरूप कर्म हैं वे तो हमें भोगने ही पड़ेंगे। और वे भी सरलता से कैसे भोगें, उसके सब रास्ते हमने बताए हैं कि, ''भाई, यह 'दादा भगवान के असीम जय जयकार हो' बोलना, त्रिमंत्र बोलना, नव कलमें बोलना।''

संसारी दु:ख का अभाव, वह मुक्ति का प्रथम अनुभव कहलाता है। जब हम आपको 'ज्ञान' देते हैं, तब वह आपको दूसरे ही दिन से हो जाता है। फिर यह शरीर का बोझ, कर्मों का बोझ वे सब टूट जाते हैं, वह दूसरा अनुभव। फिर आनंद ही इतना अधिक होता है कि जिसका वर्णन ही नहीं हो सकता!!

प्रश्नकर्ता : आपके पास से ज्ञान मिला, वही आत्मज्ञान है न?

दादाश्री : जो मिलता है, वह आत्मज्ञान नहीं है। भीतर प्रकट हुआ वह आत्मज्ञान है। हम बुलवाते हैं और आप बोलो तो उसके साथ ही पाप भस्मीभूत होते हैं और भीतर ज्ञान प्रकट हो जाता है। वह आपके भीतर प्रकट हो गया है न?

महात्मा : हाँ, हो गया है।

दादाश्री : आत्मा प्राप्त करना क्या कुछ आसान है? उसके पीछे

(ज्ञानविधि के समय) ज्ञानाग्नि से पाप भस्मीभूत हो जाते हैं। दूसरा क्या होता है? आत्मा और देह जुदा हो जाते हैं। तीसरा क्या होता है कि भगवान की कृपा उतरती है, जिससे निरंतर जागृति उत्पन्न हो जाती है, उससे प्रज्ञा की शुरूआत हो जाती है।

दूज में से पूनम

हम जब ज्ञान देते हैं तब अनादि काल से, अर्थात् लाखों जन्म की जो अमावस्या थी, अमावस्या समझे आप? 'नो मून' अनादि काल से 'डार्कनेस' (अंधेरे) में ही जी रहे हैं सभी। उजाला देखा ही नहीं। मून (चंद्र) देखा ही नही था! तो हम जब यह ज्ञान देते हैं तब मून प्रकट हो जाता है। पहले वह दूज के चाँद जितना उजाला देता है। पूरा ही ज्ञान दे देते हैं फिर भी अंदर कितना प्रकट होता है? दूज के चँद्रमा जितना ही। फिर इस जन्म में पूनम हो जाए, तब तक का आपको करना है। फिर दूज से तीज होगी, चोथ होगी, चोथ से पंचमी होगी....और पूनम हो जाएगी तो फिर कम्पलीट हो गया! अर्थात् केवलज्ञान हो गया। कर्म नहीं बँधेंगे, कर्म बँधने रूक जाएँगे। क्रोध-मान-माया-लोभ बंद हो जाएँगे। पहले वास्तव में अपने आपको जो चंदूभाई मानता था, वही भ्रांति थी। वास्तव में 'मैं चंदूभाई हूँ' वह गया। वह भ्रांति गई। अब तुझे जो आज्ञाएँ दी हैं, उन आज्ञाओं में रहना।

यहाँ ज्ञानविधि में आओगे तो मैं सभी पाप धो दूँगा, फिर आपको खुद के दोष दिखेंगे और खुद के दोष दिखे तभी से समझना कि अब मोक्ष में जाने की तैयारी हुई।

11. आत्मज्ञान प्राप्ति के बाद आज्ञापालन का महत्व

आज्ञा, ज्ञान के प्रोटेक्शन के लिए

हमारे ज्ञान देने के पश्चात आपको आत्म अनुभव हो जाने पर क्या काम बाकी रहता है? ज्ञानी पुरुष की 'आज्ञा' का पालन। 'आज्ञा' ही धर्म और 'आज्ञा' ही तप। और हमारी आज्ञा संसार (व्यवहार) में ज़रा

सी भी बाधक नहीं है। संसार में रहते हुए भी संसार का असर नहीं हो, ऐसा यह अक्रम विज्ञान है।

यह काल कैसा है कि सर्वत्र कुसंग है। रसोईघर से लेकर ऑफिस में, घर में, रास्ते में, बाहर, गाड़ी में, ट्रेन में, इस तरह सब जगह कुसंग ही है। कुसंग है, इसलिए यह जो ज्ञान मैंने आपको दो घंटों में दिया है, उसे यह कुसंग खा जाएगा। कुसंग नहीं खा जाएगा? उसके लिए पाँच आज्ञाओं की प्रोटेक्शन बाड़ दी कि यह प्रोटेक्शन करते रहोगे तो अंदर दशा में ज़रा भी फर्क नहीं पड़ेगा। वह ज्ञान उसे दी गई स्थिति में ही रहेगा। यदि बाड़ टूट जाए तो ज्ञान को खत्म कर देगा, धूल में मिला देगा।

यह ज्ञान तो मैंने आपको दिया है और भेदज्ञान से जुदा भी कर दिया है लेकिन अब वह जुदा ही रहे, उसके लिए ये पाँच वाक्य (आज्ञा के रूप में) मैं आपको प्रोटेक्शन के लिए देता हूँ ताकि यह जो कलियुग है न, उस कलयुग में लूट न लें सभी। बोधबीज उगे तो पानी वगैरह छिड़कना पड़ेगा न? बाड़ बनानी पड़ेगी या नहीं बनानी पड़ेगी?

'ज्ञान' के बाद कौन सी साधना?

प्रश्नकर्ता : इस ज्ञान के बाद में अब किस प्रकार की साधना करनी चाहिए?

दादाश्री : साधना तो, इन पाँच आज्ञाओं का पालन करते हो न, वही! अब और कोई साधना नहीं है। बाकी सभी साधना बँधनकारक है। ये पाँच आज्ञा छुड़वाने वाली हैं।

प्रश्नकर्ता : ये जो पाँच आज्ञाएँ है, उससे भी आगे ऐसा कुछ है?

दादाश्री : पाँच आज्ञाओं की एक बाड़ हैं, आपके लिए, तो यह आपका माल कोई चुरा न लें वैसी बाड़ आप बनाकर रखो तो एक्ज़ेक्ट जैसा हमने दिया है वैसा ही रहेगा और बाड़ ढीली हुई तो कोई घुसकर बिगाड़ देगा। तो उसे रिपेयर करने वापस मुझे आना पड़ेगा। जब तक इन पाँच आज्ञाओं में रहोगे, तब तक हम निरंतर समाधि की गारन्टी देते हैं।

आज्ञा से तीव्र प्रगति

प्रश्नकर्ता : ज्ञान प्राप्त करने के पश्चात् हमारी जो प्रगति होती है उस प्रगति की स्पीड किस पर आधारित है? क्या करने से तेज़ी से प्रगति होगी?

दादाश्री : पाँच आज्ञा पालें तो सबकुछ तेज़ी से होगा और पाँच आज्ञा ही उसका कारण है। पाँच आज्ञा पालने से आवरण टूटता जाता है। शक्तियाँ प्रकट होती जाती हैं। जो अव्यक्त शक्तियाँ हैं, वे व्यक्त होती जाती हैं। पाँच आज्ञा पालन से ऐश्वर्य व्यक्त होता है। सभी अलग-अलग तरह की शक्तियाँ प्रकट होती हैं। आज्ञापालन करने पर निर्भर करता है।

हमारी आज्ञा के प्रति सिन्सियर रहना वह तो सब से बड़ा मुख्य गुण है। हमारी आज्ञा पालन करने से जो अबुध हुआ वह हमारे जैसा ही हो जाता है न! लेकिन जब तक आज्ञा का सेवन है, तब तक फिर आज्ञा में बदलाव नहीं होना चाहिए। तो परेशानी नहीं होगी।

दृढ़ निश्चय से ही आज्ञा पालन

दादा की आज्ञा का पालन करना है वही सब से बड़ी चीज़ है। आज्ञा का पालन करना है ऐसा तय करना चाहिए। आज्ञा का पालन हो पाता है या नहीं, वह आपको नहीं देखना है। आज्ञा का जितना पालन हो सके उतना ठीक है, लेकिन आपको तय करना चाहिए कि आज्ञा पालन करना है।

प्रश्नकर्ता : आज्ञा पालन कम या ज़्यादा हो पाए तो, उसमें हर्ज नहीं है न?

दादाश्री : हर्ज नहीं, ऐसा नहीं है। आपको तय करना है कि आज्ञा का पालन करना ही है? सुबह से ही तय करना है कि 'मुझे पाँच आज्ञा में ही रहना है, पालन करना है।' तय किया तभी से हमारी आज्ञा में आ गया, मुझे इतना ही चाहिए।

आज्ञा का पालन करना भूल जाए तो प्रतिक्रमण करना कि 'हे दादा

दो घंटों के लिए मैं भूल गया था, आपकी आज्ञा भूल गया लेकिन मुझे तो आज्ञा का पालन करना है। मुझे माफ कीजिए।' तो पिछली सभी परीक्षाएँ पास। सौ के सौ मार्क्स पूरे। अत: जोखिमदारी नहीं रही। आज्ञा में आ जाओगे तो संसार स्पर्श नहीं करेगा। हमारी आज्ञा का पालन करोगे तो आपको कुछ भी स्पर्श नहीं करेगा।

'आज्ञा' पालन से वास्तविक पुरुषार्थ की शुरूआत

मैंने आपको ज्ञान दिया तो आप प्रकृति से जुदा हुए। 'मैं शुद्धात्मा' यानी पुरुष और उसके बाद में वास्तविक पुरुषार्थ है, रियल पुरुषार्थ है यह।

प्रश्नकर्ता : रियल पुरुषार्थ और रिलेटिव पुरुषार्थ, उन दोनों में फर्क बताइए ना।

दादाश्री : रियल पुरुषार्थ में करने की चीज़ नहीं होती। दोनों में फर्क यह है कि रियल पुरुषार्थ अर्थात् 'देखना' और 'जानना' और रिलेटिव पुरुषार्थ यानी क्या? भाव करना। मैं ऐसा करूँगा।

आप चंदूभाई थे और जो पुरुषार्थ करते थे वह भ्रांति का पुरुषार्थ था लेकिन जब 'मैं शुद्धात्मा हूँ' कि प्राप्ति की और उसके बाद पुरुषार्थ करो, दादा की पाँच आज्ञा में रहो तो वह रियल पुरुषार्थ है। पुरुष (आत्मा) होकर पुरुषार्थ किया कहलाएगा।

प्रश्नकर्ता : यह जो ज्ञान बीज बोया वही प्रकाश है, वही ज्योति है?

दादाश्री : वही! लेकिन बीज के रूप में। अब धीरे-धीरे वह पूनम होगी। पुद्‌गल और पुरुष दोनों जुदा हुए, तभी से सही पुरुषार्थ शुरू होता है। जहाँ पुरुषार्थ शुरू हुआ, तो वह दूज से पूनम कर देगा। हाँ! इन आज्ञाओं का पालन किया तो वैसा होगा। और कुछ करना ही नहीं है सिर्फ आज्ञा का पालन करना है।

प्रश्नकर्ता : दादा, पुरुष हो जाने के बाद के पुरुषार्थ का वर्णन तो कीजिए थोड़ा। वह व्यवहार में कैसा बर्ताव करता है?

दादाश्री : व्यवहार में ही है न यह सब, ये अपने सभी महात्मा पाँच आज्ञा में रहते हैं न! पाँच आज्ञा वही दादा, वही रियल पुरुषार्थ।

पाँच आज्ञा का पालन करना, वही पुरुषार्थ है और पाँच आज्ञा के परिणाम स्वरूप क्या होता है? ज्ञाता-दृष्टा पद में रहा जा सकता है और हमें कोई पूछे कि खरा पुरुषार्थ क्या है? तो हम कहेंगे, 'ज्ञाता-दृष्टा' रहना वह। तो ये पाँच आज्ञाएँ ज्ञाता-दृष्टा रहना ही सिखाती है न? हम देखते हैं कि जहाँ-जहाँ जिसने सच्चे दिल से पुरुषार्थ शुरू किया है उस पर हमारी कृपा अवश्य बरसती ही है।

12. आत्मानुभव तीन स्टेज में, अनुभव-लक्ष-प्रतीति

प्रश्नकर्ता : आत्मा का अनुभव हो जाने पर क्या होता है?

दादाश्री : आत्मा का अनुभव हो गया, यानी देहाध्यास छूट गया। देहाध्यास छूट गया, यानी कर्म बँधना रुक गया। फिर इससे ज़्यादा और क्या चाहिए?

पहले चंदूभाई क्या थे और आज चंदूभाई क्या हैं, वह समझ में आता है। तो यह परिवर्तन कैसे? आत्म-अनुभव से। पहले देहाध्यास का अनुभव था और अब यह आत्म-अनुभव है।

प्रतीति अर्थात् पूरी मान्यता सौ प्रतिशत बदल गई और 'मैं शुद्धात्मा ही हूँ' वही बात पूरी तरह से तय हो गई। 'मैं शुद्धात्मा हूँ' वह श्रद्धा बैठती है लेकिन वापस उठ जाती है और प्रतीति नहीं ऊठती। श्रद्धा बदल जाती है, लेकिन प्रतीति नहीं बदलती

यह प्रतीति यानी मान लो हमने यहाँ ये लकड़ी रखी अब उस पर बहुत दबाव आए तो ऐसे टेढ़ी हो जाएगी लेकिन स्थान नहीं छोड़ेगी। भले ही कितने ही कर्मों का उदय आए, खराब उदय आए लेकिन स्थान नहीं छोड़ेगी। 'मैं शुद्धात्मा हूँ' वह गायब नहीं होगा।

अनुभव, *लक्ष* और प्रतीति ये तीनों रहेंगे। प्रतीति सदा के लिए रहेगी।

लक्ष तो कभी-कभी रहेगा। व्यापार में या किसी काम में लगे कि फिर से *लक्ष* चूक जाएँ और काम खत्म होने पर फिर से *लक्ष* में आ जाएँ। और अनुभव तो कब होगा, कि जब काम से, सबसे निवृत होकर एकांत में बैठे हों तब अनुभव का स्वाद आएगा। यद्यपि अनुभव तो बढ़ता ही रहता है।

अनुभव-*लक्ष* और प्रतीति। प्रतीति मुख्य है, वह आधार है। वह आधार बनने के बाद *लक्ष* उत्पन्न होता है। उसके बाद 'मैं शुद्धात्मा हूँ' वह निरंतर *लक्ष* में रहता ही है और जब आराम से बैठे हों और ज्ञाता-दृष्टा रहें तब वह अनुभव है।

13. प्रत्यक्ष सत्संग का महत्व

उलझन के समाधान के लिए सत्संग की आवश्यकता

इस 'अक्रम विज्ञान' के माध्यम से आपको भी आत्मानुभव ही प्राप्त हुआ है। लेकिन वह आपको आसानी से प्राप्त हो गया है, इसलिए आपको खुद को लाभ होता है, प्रगति की जा सकती है। विशेष रूप से 'ज्ञानी' के परिचय में रहकर समझ लेना है।

यह ज्ञान बारीक़ी से समझना पड़ेगा। क्योंकि यह ज्ञान घंटेभर में ही दिया गया है। कितना बड़ा ज्ञान! जो एक करोड़ साल में नहीं हो सके वही ज्ञान घंटेभर में हो जाता है। मगर बेसिक (बुनियादी) होता है। फिर विस्तार से समझ लेना पड़ेगा न? उसे विगतपूर्वक समझने के लिए तो आप मेरे पास बैठकर पूछोगे तब मैं आपको समझाऊँ। इसलिए हम कहा करते हैं न कि सत्संग की बहुत आवश्यकता है। आप ज्यों-ज्यों यहाँ गुत्थियाँ पूछते जाएँ, त्यों-त्यों वे गुत्थियाँ अंदर खुलती जाती है। वे तो जिसे चुभें, उसे पूछ लेना चाहिए।

बीज बोने के बाद में पानी छिड़कना ज़रूरी

प्रश्नकर्ता : ज्ञान लेने के बाद भी 'मैं शुद्धात्मा हूँ' ऐसा ध्यान में लाना पड़ता है, वह कुछ कठिन है।

दादाश्री : नहीं, ऐसा होना चाहिए। रखना नहीं पड़ेगा, अपने आप ही रहेगा। तो उसके लिए क्या करना पड़ेगा? उसके लिए मेरे पास आते-जाते रहना पड़ेगा। जो पानी छिड़का जाना चाहिए वह छिड़का नहीं जाता इसलिए इन सब में मुश्किल आती है। आप व्यापार पर ध्यान नहीं दो तो व्यापार का क्या होगा?

प्रश्नकर्ता : डाउन हो जाएगा।

दादाश्री : हाँ, ऐसा ही इसमें भी है। ज्ञान ले आए तो फिर उस पर पानी छिड़कना पड़ेगा, तो पौधा बड़ा होगा। छोटा पौधा होता है न, उस पर भी पानी छिड़कना पड़ता है। तो कभी-कभी महीने दो महीने में ज़रा पानी छिड़कना चाहिए।

प्रश्नकर्ता : घर पर छिड़कते हैं न।

दादाश्री : नहीं, लेकिन घर पर हो ऐसा नहीं चलेगा। ऐसा तो चलता होगा? प्रत्यक्ष रूप से ज्ञानी यहाँ पर आएँ हों और आपको उसकी कीमत ही न हो... स्कूल गए थे या नहीं? कितने सालों तक गए थे?

प्रश्नकर्ता : दस साल।

दादाश्री : तो क्या सीखा वहाँ? भाषा! इस अंग्रेजी भाषा के लिए दस साल निकाले तो यहाँ मेरे पास तो छः महीने कहता हूँ। छः महीने अगर मेरे पीछे घूमोगे न तो काम हो जाएगा।

निश्चय स्ट्रोंग तो अंतराय ब्रेक

प्रश्नकर्ता : बाहर के प्रोग्राम बन गए हैं, इसलिए आने में परेशानी होगी।

दादाश्री : वह तो यदि आपका भाव स्ट्रोंग होगा तो वह टूट जाएगा। अंदर अपना भाव स्ट्रोंग है या ढीला है वह देख लेना है।

गारन्टी सत्संग से, संसार के मुनाफे की

मेरे यहाँ सभी व्यापारी आते हैं न, और वे भी ऐसे जो यदि दुकान

पर एक घंटे देरी से जाएँ तो पाँचसौ हज़ार रुपये का नुकसान हो जाए। उनसे मैंने कहा, 'यहाँ पर आओगे उतने समय पर नुकसान नहीं होगा और यदि बीच रास्ते में आधे घंटे किसी दुकान में खड़े रहोगे तो आपको नुकसान होगा। यहाँ पर आओगे तो जोखिमदारी मेरी क्योंकि इसमें मुझे कोई लेना-देना नहीं है। यानी आप यहाँ पर अपने आत्मा के लिए ही आए हो इसलिए कहता हूँ सभी से, आपको नुकसान नहीं होगा किसी भी प्रकार का, यहाँ पर आओगे तो।

दादा के सत्संग की अलौकिकता

यदि कर्म का उदय बहुत भारी आए तब आपको समझ लेना है कि यह उदय भारी है इसलिए शांत रहना है। उदय भारी है इसलिए फिर उसे ठंडा करके सत्संग में ही बैठे रहना। ऐसा चलता ही रहेगा। कैसे-कैसे कर्मों के उदय आएँगे वह कहा नहीं जा सकता।

प्रश्नकर्ता : जागृति विशेष रूप से बढ़े उसका क्या उपाय है?

दादाश्री : वह तो इस सत्संग में पड़े रहना, वही है।

प्रश्नकर्ता : आपके पास छः महीने बैठें तो उसमें स्थूल परिवर्तन होगा, फिर सूक्ष्म परिवर्तन होगा, ऐसा कह रहे हैं?

दादाश्री : हाँ, सिर्फ बैठने से ही परिवर्तन होता रहेगा। अतः यहाँ परिचय में रहना चाहिए। दो घंटे, तीन घंटे, पाँच घंटे। जितना जमा किया उतना तो लाभ। लोग ज्ञान लेने के बाद ऐसा समझते हैं कि 'हमें तो अब कुछ काम रहा ही नहीं है! लेकिन ऐसा नहीं है, क्योंकि अभी तक परिवर्तन तो हुआ ही नहीं!

रहो ज्ञानी की विसीनिटी (समीपता) में

प्रश्नकर्ता : महात्माओं को क्या गर्ज़ रखनी रखनी चाहिए, पूर्ण पद के लिए?

दादाश्री : जितना हो सके उतना ज्ञानी के पास जीवन बिताना

चाहिए वही गरज, और कोई गरज नहीं। रात-दिन, भले ही कहीं भी हो लेकिन दादा के पास ही रहना चाहिए। उनकी (आत्मज्ञानी की) विसीनिटी में (दृष्टि पड़े वैसे) रहना चाहिए।

यहाँ 'सत्संग' में बैठे-बैठे कर्म के बोझ कम होते जाते हैं और बाहर तो निरे कर्म के बोझ बढ़ते ही रहते हैं। वहाँ तो निरी उलझनें ही हैं। हम आपको गारन्टी देते हैं कि जितना समय यहाँ सत्संग में बैठोगे उतने समय तक आपके कामधंधे में कभी भी नुकसान नहीं होगा और लेखा-जोखा निकालोगे तो पता चलेगा कि कुल मिलाकर फायदा ही हुआ है। यह सत्संग, यह क्या कोई ऐसा-वैसा सत्संग है? केवल आत्मा हेतु ही जो समय निकाले उसे संसार में कहाँ से नुकसान होगा? सिर्फ फायदा ही होता है। परन्तु ऐसा समझ में आ जाए, तब काम होगा न? इस सत्संग में बैठे यानी आना यों ही बेकार नहीं जाएगा। यह तो कितना सुंदर काल आया है! भगवान के समय में सत्संग में जाना हो तो पैदल चलते-चलते जाना पड़ता था! और आज तो बस या ट्रेन में बैठे कि तुरन्त ही सत्संग में आया जा सकता है!!

प्रत्यक्ष सत्संग वह सर्वश्रेष्ठ

यहाँ बैठे हुए यदि कुछ भी न करो फिर भी अंदर परिवर्तन होता ही रहेगा क्योंकि सत्संग है, सत् अर्थात् आत्मा उसका संग! ये सत् जो प्रकट हो चुका है, उनके संग में बैठे, यह अंतिम प्रकार का सत्संग कहलाता है।

सत्संग में पड़े रहने से यह सब खाली हो जाएगा क्योंकि साथ में रहने से, हमें (ज्ञानी को) देखने से हमारी डायरेक्ट (सीधी) शक्तियाँ प्राप्त होती हैं, इसलिए जागृति एकदम बढ़ जाती है! सत्संग में रह पाएँ ऐसा करना चाहिए। 'इस' सत्संग का साथ रहा तो काम हो जाएगा।

काम निकाल लेना यानी क्या? जितना हो सके उतने अधिक दर्शन करना। जितना हो सके उतना सत्संग में आमने-सामने लाभ ले लेना,

प्रत्यक्ष का सत्संग। न हो सके तो उतना खेद रखना अंत में! ज्ञानी पुरुष के दर्शन करना और उनके पास सत्संग में बैठे रहना।

14. दादा की पुस्तक तथा मेगेज़िन का महत्व

आप्तवाणी, कैसी क्रियाकारी !

यह 'ज्ञानी पुरुष' की वाणी है और फिर ताज़ी है। अभी के पर्याय हैं, इसलिए उसे पढ़ते ही अपने सारे पर्याय बदलते जाते हैं, और वैसे-वैसे आनंद उत्पन्न होता जाता है क्योंकि यह वीतरागी वाणी है। राग-द्वेष रहित वाणी हो तो काम होता है, नहीं तो काम नहीं होता। भगवान की वाणी वीतराग थी, इसलिए उसका असर आज तक चल रहा है। तो 'ज्ञानी पुरुष' की वाणी का भी असर होता ही है। वीतराग वाणी के अलावा दूसरा कोई उपाय नहीं है।

प्रत्यक्ष परिचय नहीं मिले तब

प्रश्नकर्ता : दादा, यदि परिचय में नहीं रह सकें, तब पुस्तकें कितनी मदद करतीं हैं?

दादाश्री : सब मदद करतीं हैं। यहाँ की, दादा की प्रत्येक चीज़, वे शब्द दादा के हैं (पुस्तक के), आशय दादा का है, मतलब सभी चीज़ें हैल्प करती है।

प्रश्नकर्ता : मगर साक्षात परिचय और इसमें अंतर रहेगा न?

दादाश्री : वह तो, यदि अंतर देखने जाएँ तो सभी में अंतर होता है। इसलिए हमें तो जिस समय जो आया वह करना है। 'दादा' नहीं हों तब क्या करोगे? दादाजी की पुस्तक है, वह पढ़ना। पुस्तक में दादाजी ही हैं न? वर्ना आँखें बंद की कि तुरंत दादाजी दिखाई देंगे।

15. पाँच आज्ञा से जगत् निर्दोष

'स्वरूपज्ञान' बिना तो भूल दिखती ही नहीं। क्योंकि 'मैं ही चंदूभाई

हूँ और मुझ में तो कोई दोष नहीं है, मैं तो सयाना-समझदार हूँ,' ऐसा रहता है और 'स्वरूपज्ञान' की प्राप्ति के बाद आप निष्पक्षपाती हुए, मन-वचन-काया पर आपको पक्षपात नहीं रहा। इसलिए खुद की भूलें, आपको खुद को दिखती हैं।

जिसे खुद की भूल पता चलेगी, जिसे प्रतिक्षण अपनी भूल दिखेगी, जहाँ-जहाँ हो वहाँ दिखे, वह खुद 'परमात्मा स्वरूप' हो गया! 'मैं चंदूभाई नहीं, मैं शुद्धात्मा हूँ' यह समझने के बाद ही निष्पक्षपाती हो पाते हैं। किसीका ज़रा-सा भी दोष दिखे नहीं और खुद के सभी दोष दिखें, तभी खुद का कार्य पूरा हुआ कहलाता है। खुद के दोष दिखने लगे, तभी से हमारा दिया हुआ 'ज्ञान' परिणमित होना शुरू हो जाता है। जब खुद के दोष दिखाई देने लगे, तब दूसरों के दोष दिखते नहीं हैं। औरों के दोष दिखें तो वह बहुत बड़ा गुनाह कहलाता है।

इस निर्दोष जगत् में जहाँ कोई दोषित है ही नहीं, वहाँ किसे दोष दें? जब तक दोष हैं, तब तक अहंकार निर्मूल नहीं होगा। जब तक अहंकार निर्मूल न हो जाए, तब तक दोष धोने हैं।

कोई दोषित दिखता है, तो वह अभी भी अपनी भूल है। कभी न कभी तो, निर्दोष देखना पड़ेगा न? अपने हिसाब से ही है यह सब। इतना थोड़े में समझ जाओ न, तो भी सब बहुत काम आएगा।

आज्ञापालन से बढ़े निर्दोष दृष्टि

मुझे जगत् निर्दोष दिखता है। आपको ऐसी दृष्टि आएगी, तब यह पज़ल सॉल्व हो जाएगा। मैं आपको ऐसा उजाला दूँगा और इतने पाप धो डालूँगा कि जिससे आपको उजाला रहे और आपको निर्दोष दिखता जाए। और साथ-साथ पाँच आज्ञाएँ दूँगा। उन पाँच आज्ञाओं में रहोगे तो जो दिया हुआ ज्ञान है, उसे वे ज़रा भी फ्रेक्चर नहीं होने देंगी।

तब से हुआ समकित!

खुद का दोष दिखें, तभी से ही समकित हुआ, ऐसा कहलाएगा।

खुद का दोष दिखे, तब से समझना कि खुद जाग्रत हुआ है। नहीं तो सब नींद में ही चल रहा है। दोष खतम हुए या नहीं हुए, उसकी बहुत चिंता करने जैसी नहीं है, लेकिन जागृति की मुख्य ज़रूरत है। जागृति होने के बाद फिर नये दोष खड़े नहीं होते हैं और जो पुराने दोष हैं, वे निकलते रहते हैं। हमें उन दोषों को देखना है कि किस तरह से दोष होते हैं।

जितने दोष, उतने ही चाहिए प्रतिक्रमण

'अनंत दोष का भाजन है तो उतने ही प्रतिक्रमण करने पड़ेंगे। जितने दोष भरकर लाए हो, वे आपको दिखेंगे। ज्ञानी पुरुष के ज्ञान देने के बाद दोष दिखने लगते हैं, नहीं तो खुद के दोष खुद को नहीं दिखते, उसी का नाम अज्ञानता। खुद का एक भी दोष नहीं दिखता है और किसीके देखने हों तो बहुत सारे देख ले, उसका नाम मिथ्यात्व।'

दृष्टि निजदोषों के प्रति...

यह ज्ञान लेने के बाद अंदर खराब विचार आएँ, उन्हें देखना, अच्छे विचार आएँ उन्हें भी देखना। अच्छे पर राग नहीं और खराब पर द्वेष नहीं। अच्छा-बुरा देखने की हमें ज़रूरत नहीं है। क्योंकि मूलतः सत्ता ही अपने काबू में नहीं है। अतः ज्ञानी क्या देखते हैं? सारे जगत् को निर्दोष देखते हैं। क्योंकि यह सब 'डिस्चार्ज' में है, उसमें उन बेचारों का क्या दोष? आपको कोई गाली दे, वह 'डिस्चार्ज'। 'बॉस' आपको उलझन में डाले, तो वह भी 'डिस्चार्ज' ही है। बॉस तो निमित्त है। जगत् में किसी का दोष नहीं है। जो दोष दिखते हैं, वह खुद की ही भूल है और वही 'ब्लंडर्स' हैं और उसीसे यह जगत् कायम है। दोष देखने से, उल्टा देखने से ही बैर बँधता है।

❖❖❖❖❖

एडजस्ट एवरीव्हेर

पचाओ एक ही शब्द

'एडजस्ट एवरीव्हेर' इतना ही शब्द यदि आप जीवन में उतार लोगे तो बहुत हो गया। आपको अपने आप शांति प्राप्त होगी। इस कलियुग के ऐसे भयंकर काल में यदि एडजस्ट नहीं हुए न, तो खत्म हो जाओगे!

संसार में और कुछ नहीं आए तो हर्ज नहीं लेकिन एडजस्ट होना तो आना ही चाहिए। सामने वाला 'डिसएडजस्ट' होता रहे, लेकिन आप एडजस्ट होते रहोगे तो संसार में तैरकर पार उतर जाओगे। जिसे दूसरों से अनुकूल होना आया, उसे कोई दुःख ही नहीं रहता। 'एडजस्ट एवरीव्हेर'! प्रत्येक के साथ एडजस्टमेन्ट हो जाए, यही सब से बड़ा धर्म है। इस काल में तो भिन्न-भिन्न प्रकृतियाँ हैं, इसलिए फिर एडजस्ट हुए बिना कैसे चलेगा?

यह आइसक्रीम आपसे ऐसा नहीं कहती कि मुझ से दूर रहो। आपको नहीं खाना हो तो मत खाओ। लेकिन ये बुज़ुर्ग लोग तो उस पर चिढ़ते रहते हैं। ये मतभेद तो युग परिवर्तन के हैं। ये बच्चे तो ज़माने के अनुसार चलेंगे।

हम क्या कहते हैं कि ज़माने के अनुसार एडजस्ट हो जाओ। लड़का नई टोपी पहनकर आए, तब ऐसा मत कहना कि, 'ऐसी कहाँ से ले आया?' उसके बजाय एडजस्ट हो जाना कि, 'इतनी अच्छी टोपी कहाँ से लाया? कितने में लाया? बहुत सस्ती मिली?' इस प्रकार एडजस्ट हो जाना।

अपना धर्म क्या कहता है कि असुविधा में सुविधा देखो। रात में मुझे विचार आया कि, 'यह चद्दर मैली है।' लेकिन फिर एडजस्टमेन्ट ले लिया तो फिर इतनी मुलायम महसूस हुई कि बात ही मत पूछो। पंचेन्द्रिय ज्ञान असुविधा दिखाता है और आत्मज्ञान सुविधा दिखाता है। इसलिए आत्मा में रहो।

यह तो, अच्छा-बुरा कहने से वे हमें सताते हैं। हमें तो दोनों को समान कर देना है। इसे 'अच्छा' कहा, इसलिए वह 'बुरा' हुआ। तब फिर वह सताता है। कोई सच बोल रहा हो उसके साथ भी और कोई झूठ बोल रहा हो उसके साथ भी 'एडजस्ट' हो जाओ। हमें कोई कहे कि 'आपमें अक़्ल नहीं है।' तब हम तुरंत उससे एडजस्ट हो जाएँगे और उसे कहेंगे कि, 'वह तो पहले से ही नहीं थी। आज तू कहाँ से खोजने आया है? तुझे तो आज मालूम हुआ, लेकिन मैं तो यह बचपन से ही जानता हूँ।' यदि ऐसा कहें तो झंझट मिट जाएगी न? फिर वह हमारे पास अक़्ल खोजने आएगा ही नहीं।

पत्नी के साथ एडजस्टमेन्ट

हमें किसी कारणवश देर हो गई, और पत्नी कुछ कहा-सुनी करने लगे कि, 'इतनी देर से आए हो? मुझे ऐसा नहीं चलेगा।' और ऐसा वैसा कहने लगे... उसका दिमाग़ घूम जाए, तब आप कहना कि 'हाँ, तेरी बात सही है, तू कहे तो वापस चला जाऊँ और तू कहे तो अंदर आकर बैठूँ।' तब वह कहे, 'नहीं, वापस मत जाना। यहाँ सो जाओ चुपचाप।' लेकिन फिर पूछो, 'तू कहे तो खाऊँ, वर्ना सो जाऊँ।' तब वह कहे 'नहीं, खा लो।' तब आपको उसका कहा मानकर खा लेना चाहिए। अर्थात् एडजस्ट हो गए। फिर सुबह फर्स्ट क्लास चाय देगी और अगर धमकाया तो फिर चाय का कप मुँह फुलाकर देगी और तीन दिन तक वही सिलसिला जारी रहेगा।

भोजन में एडजस्टमेन्ट

व्यवहार निभाया किसे कहेंगे कि जो 'एडजस्ट एवरीव्हेर' हुआ! अब डिवेलपमेन्ट का ज़माना आया है। मतभेद नहीं होने देना। इसलिए अभी लोगों को मैंने सूत्र दिया है, 'एडजस्ट एवरीव्हेर'! कढ़ी खारी बनी तो समझ लेना कि दादाजी ने एडजस्टमेन्ट लेने को कहा है, फिर थोड़ी सी कढ़ी खा लेना। हाँ, अचार याद आए, तो फिर मँगवा लेना कि थोड़ा सा अचार ले आओ। लेकिन झगड़ा नहीं, घर में झगड़ा नहीं होना चाहिए।

खुद किसी जगह मुसीबत में फँस जाएँ, तब वह खुद का एडजस्टमेन्ट कर ले, तो भी संसार सुंदर लगेगा।

नहीं भाए, फिर भी निभाओ

तेरे साथ जो कोई डिसएडजस्ट होने आए, उसके साथ तू एडजस्ट हो जा। दैनिक जीवन में यदि सास-बहू के बीच या देवरानी-जेठानी के बीच डिसएडजस्टमेन्ट होता हो, तो जिसे इस संसार चक्र से छूटना हो, तो उसे एडजस्ट हो ही जाना चाहिए। पति-पत्नी में से यदि कोई एक व्यक्ति दरार डाले तो दूसरे को जोड़ लेना चाहिए, तभी संबंध निभेगा और शांति रहेगी। इस रिलेटिव सत्य में आग्रह, ज़िद करने की ज़रा सी भी ज़रूरत नहीं है। 'इन्सान' तो कौन, कि जो एवरीव्हेर एडजस्टेबल हो।

सुधारें या एडजस्ट हो जाएँ?

हर बात में हम सामने वाले के साथ एडजस्ट हो जाएँ तो कितना अधिक सरल हो जाए! हमें साथ में क्या ले जाना है? कोई कहे कि, 'भैया, बीवी को सीधी कर दो।' 'अरे, उसे सीधी करने जाएगा तो तू टेढ़ा हो जाएगा।' इसलिए वाइफ को सीधी करने मत जाना, जैसी भी हो उसे करेक्ट कहना। आपका उसके साथ हमेशा का साथ हो तो अलग बात है, यह तो एक जन्म के बाद, फिर न जाने कहाँ खो जाएँगे। दोनों के मृत्युकाल अलग, दोनों के कर्म अलग! कुछ लेना भी नहीं और देना भी नहीं! यहाँ से वह किसके वहाँ जाएँगी, उसका क्या ठिकाना ? आप उसे सीधी करो और अगले जनम में जाए किसी और के हिस्से में!

इसलिए न तो आप उसे सीधी करो और न ही वह आपको सीधा करे। जैसा भी मिला, वही सोने जैसा। प्रकृति किसी की कभी भी सीधी नहीं हो सकती। कुत्ते की दुम टेढ़ी की टेढ़ी ही रहती है। इसलिए आप सावधान होकर चलो। जैसी है वैसी ठीक है, 'एडजस्ट एवरीव्हेर'।

टेढ़ों के साथ एडजस्ट हो जाओ

व्यवहार तो उसी को कहेंगे कि, एडजस्ट हो जाएँ ताकि पड़ोसी

भी कहें कि 'सभी घरों में झगड़े होते हैं, मगर इस घर में झगड़ा नहीं है।' जिसके साथ रास न आए, वहीं पर शक्तियाँ विकसित करनी हैं। अनुकूल है, वहाँ तो शक्ति है ही। प्रतिकूल लगना, वह तो कमज़ोरी है। मुझे सबके साथ क्यों अनुकूलता रहती है? जितने एडजस्टमेन्ट लोगे, उतनी शक्तियाँ बढ़ेंगी और अशक्तियाँ टूट जाएँगी। सही समझ तो तभी आएगी, जब सभी उल्टी समझ को ताला लग जाएगा।

नरम स्वभाव वालों के साथ तो हर कोई एडजस्ट होगा मगर टेढ़े, कठोर, गर्म मिज़ाज लोगों के साथ, सभी के साथ एडजस्ट होना आया तो काम बन जाएगा। भड़कोगे तो नहीं चलेगा। संसार की कोई चीज़ हमें 'फिट' (अनुकूल) नहीं होगी। हम ही उसे 'फिट' हो जाएँ तो यह दुनिया सुंदर है और उसे 'फिट' करने गए तो दुनिया टेढ़ी है। इसलिए एडजस्ट एवरीव्हेर!

आपको ज़रूरत हो, तब सामने वाला यदि टेढ़ा हो, फिर भी उसे मना लेना चाहिए। स्टेशन पर मज़दूर की ज़रूरत हो और वह आनाकानी कर रहा हो, फिर भी उसे चार आने ज़्यादा देकर मना लेना होगा और नहीं मनाएँगे तो वह बैग हमें खुद ही उठाना पड़ेगा न!

शिकायत? नहीं, 'एडजस्ट'

घर में भी 'एडजस्ट' होना आना चाहिए। आप सत्संग से देर से घर जाओ तो घर वाले क्या कहेंगे? 'थोड़ा-बहुत तो समय का ध्यान रखना चाहिए न?' तब हम जल्दी घर जाएँ तो उसमें क्या गलत है? अब ऐसा मार खाने का वक्त क्यों आया? क्योंकि पहले बहुत शिकायतें की थीं। उसका यह परिणाम आया है। उस समय सत्ता में आया था, तब शिकायतें ही शिकायतें की थीं। अब सत्ता नहीं है, इसलिए शिकायत किए बगैर रहना है। इसलिए अब 'प्लस-माइनस' कर डालो। सामने वाला गाली दे गया, उसे जमा कर लेना। फ़रियादी होना ही नहीं है!

घर में पति-पत्नी दोनों निश्चय करें कि मुझे 'एडजस्ट' होना है, तो दोनों का हल आ जाएगा। वह ज़्यादा खींचतान करे तब हम 'एडजस्ट'

हो जाएँ तो हल निकल आएगा। यदि 'एडजस्ट एवरीव्हेर' नहीं हुए तो सभी पागल हो जाओगे। सामने वालों को चिढ़ाते रहे, इसी वजह से पागल हुए हैं।

जिसे 'एडजस्ट' होने की कला आ गई, वह दुनिया से 'मोक्ष' की ओर मुड़ गया। 'एडजस्टमेन्ट' हुआ, उसीका नाम ज्ञान। जो 'एडजस्टमेन्ट' सीख गया, वह पार उतर गया।

कुछ लोगों को रात को देर से सोने की आदत होती है और कुछ लोगों जल्दी सोने की आदत होती है, तो उन दोनों का मेल कैसे होगा? और एक परिवार में सभी साथ रहते हों तो क्या होगा? घर में एक व्यक्ति ऐसा कहने वाला निकले कि 'आपमें तो अक्ल कम हैं', तब आपको ऐसा समझ लेना चाहिए कि यह ऐसा ही बोलने वाला है। इसलिए आपको एडजस्ट हो जाना चाहिए। इसके बजाय अगर आप सामने जवाब दोगे तो आप थक जाओगे। क्योंकि वह तो आप से टकराया, लेकिन आप भी उससे टकराओगे तो आपकी भी आँखे नहीं हैं, ऐसा प्रमाणित हो गया न!

हम प्रकृति को पहचानते हैं, इसलिए आप टकराना चाहो तो भी मैं टकराने नहीं दूँगा, मैं खिसक जाऊँगा। वर्ना दोनों का एक्सिडेन्ट हो जाएगा और दोनों के स्पेयरपार्ट्स टूट जाएँगे। किसी का बंपर टूट जाए तो अंदर बैठे हुए की क्या हालत होगी? बैठने वाले की तो दुर्दशा हो जाएगी न! इसलिए प्रकृति को पहचानो। घर में सभी की प्रकृतियाँ पहचान लेनी है।

ये टकराव क्या रोज़-रोज़ होते हैं? वे तो जब अपने कर्मों का उदय हो, तभी होते हैं, उस समय हमें 'एडजस्ट' होना है। घर में पत्नी के साथ झगड़ा हुआ हो तो झगड़ा होने के बाद वाइफ को होटल में ले जाकर, खाना खिलाकर खुश कर देना। अब तंत नहीं रहना चाहिए।

जो भी थाली में आए वह खा लेना। जो सामने आया, वह संयोग है और भगवान ने कहा है कि संयोग को धक्का मारेगा तो वह धक्का तुझे लगेगा। इसलिए हमारी थाली में हमें नहीं रुचती चीज़ें रखी हों, तब भी उसमें से दो चीज़ें खा लेते हैं।

जिसे एडजस्ट होना नहीं आया, उस मनुष्य को मनुष्य कैसे कहेंगे? संयोगों के वश होकर एडजस्ट हो जाए, उस घर में कुछ भी झंझट नहीं होगा। उनका लाभ उठाना हो तो एडजस्ट हो जाओ। यह तो फायदा भी किसी चीज़ का नहीं, और बैर बाँधेगे, वह अलग।

प्रत्येक व्यक्ति के जीवन में कुछ प्रिन्सिपल (सिद्धांत) होने ही चाहिए। फिर भी संयोगानुसार वर्तन करना चाहिए। संयोगों के साथ एडजस्ट हो जाए, वह मनुष्य। यदि प्रत्येक संयोग में एडजस्टमेन्ट लेना आ जाए तो ठेठ मोक्ष में पहुँचा जा सके, ऐसा ग़ज़ब का हथियार है।

डिस्‌एडजस्टमेन्ट, यही मूर्खता

अपनी बात सामने वाले को 'एडजस्ट' होनी ही चाहिए। अपनी बात सामने वाले को 'एडजस्ट' नहीं हो तो वह अपनी ही भूल है। भूल सुधरे तो 'एडजस्ट' हो पाएगा। वीतरागों की बात 'एवरीव्हेर एडजस्टमेन्ट' की है। यह 'डिसएडजस्टमेन्ट' ही मूर्खता है। 'एडजस्टमेन्ट' को हम न्याय कहते हैं। आग्रह-दुराग्रह, वह कोई न्याय नहीं कहलाता।

अभी तक एक भी मनुष्य हम से डिसएडजस्ट नहीं हुआ है। और इन लोगों को तो घर के चार सदस्य भी एडजस्ट नहीं होते हैं। यह एडजस्ट होना आएगा या नहीं आएगा? ऐसा हो सकेगा कि नहीं हो सकेगा? हम जैसा देखते हैं वैसा तो हमें आ ही जाता है न? इस संसार का नियम क्या है कि जैसा आप देखोगे उतना तो आपको आ ही जाएगा। उसमें कुछ सिखाने जैसा नहीं रहता।

संसार में और कुछ भले ही न आए तो कोई हर्ज नहीं है। काम-धंधा करना कम आता हो तो हर्ज नहीं है, लेकिन एडजस्ट होना आना चाहिए। अर्थात्, वस्तुस्थिति में एडजस्ट होना सीखना चाहिए। इस काल में एडजस्ट होना नहीं आया तो मारा जाएगा। इसलिए 'एडजस्ट एवरीव्हेर' होकर काम निकाल लेने जैसा है।

❖❖❖❖❖

टकराव टालो

मत आओ टकराव में

'किसी के साथ टकराव में मत आना और टकराव टालना।' हमारे इस वाक्य का यदि आराधन करोगे तो ठेठ मोक्ष तक पहुँचोगे। हमारे एक ही वाक्य का यदि कोई पालन करे तो वह मोक्ष में ही जाएगा।

हमारे एक शब्द का यदि एक दिन भी पालन करे तो ग़ज़ब की शक्ति उत्पन्न होगी! भीतर इतनी सारी शक्तियाँ हैं कि कोई कैसे भी टकराव करने आए, फिर भी हम उसे टाल सकते हैं।

यदि भूल से भी तुम किसी के टकराव में आ गए तो उसका *निकाल* कर लेना। सहजता से, उस टकराव में से घर्षण की चिंगारियाँ उड़ाए बिना निकल जाना।

ट्रैफिक के नियम से टले टकराव

प्रत्येक टकराव में हमेशा दोनों को नुकसान होता है। आप सामने वाले को दुःख पहुँचाओगे तो साथ साथ, वैसे ही, उसी क्षण आपको भी दुःख पहुँचे बगैर रहेगा नहीं। यह टकराव है। इसलिए मैंने यह उदाहरण दिया है कि रोड पर ट्रैफिक का धर्म क्या है, कि टकराओगे तो आप मर जाओगे, टकराने में जोखिम है। इसलिए किसी के साथ टकराना नहीं। इसी प्रकार इन व्यवहारिक कार्यों में भी टकराना नहीं।

यदि कोई आदमी लड़ने आए और शब्द बम के गोले जैसे आ रहे हों, तब आपको समझ लेना चाहिए कि टकराव टालना है। आपके मन पर बिल्कुल असर न हो, फिर भी कभी कोई असर हो जाए, तब समझना चाहिए कि सामने वाले के मन का असर हम पर पड़ा है। तब हमें खिसक जाना चाहिए। ये सब टकराव हैं। इसे जैसे-जैसे समझते जाओगे, वैसे-वैसे टकराव टालते जाओगे। टकराव टालने से मोक्ष होता है।

टकराव से यह जगत् निर्मित हुआ है। उसे भगवान ने, 'बैर से

बना है,' ऐसा कहा है। हर एक मनुष्य, अरे, जीवमात्र बैर रखता है। हद से ज़्यादा हुआ तो बैर रखे बगैर रहेगा नहीं। कोई भी हो पर बैर रखता ही है क्योंकि सभी में आत्मा है। आत्मशक्ति सभी में एक समान है। कारण यह है कि, इस *पुद्गल* (शरीर) की कमज़ोरी की वजह सहन करना पड़ता है, लेकिन सहन करने के साथ वह बैर रखे बगैर रहता नहीं है और फिर अगले जन्म में वह उसका बैर वसूल करता है वापस।

कोई मनुष्य बहुत बोले, तो उसके कैसे भी बोल से हमें टकराव नहीं होना चाहिए। और अपनी वजह से सामने वाले को अड़चन हो, ऐसा बोलना बड़े से बड़ा गुनाह है।

सहन? नहीं, सोल्यूशन लाओ

टकराव टालना यानी सहन करना नहीं है। सहन करोगे तो कितना करोगे? सहन करना और 'स्प्रिंग' दबाना, वे दोनों एक जैसे हैं। 'स्प्रिंग दबाई हुई कितने दिन रहेगी?' इसलिए सहन करना तो सीखना ही नहीं। सोल्यूशन लाना सीखो। अज्ञान दशा में तो सहन ही करना होता है। बाद में एक दिन 'स्प्रिंग' उछलती है, वह सब बिखेर देती है।

किसी के कारण यदि हमें सहन करना पड़े, वह अपना ही हिसाब होता है। लेकिन आपको पता नहीं चलता कि यह किस बहीखाते का और कहाँ का माल है, इसलिए हम ऐसा मानते हैं कि इसने नया माल देना शुरू किया है। नया माल कोई देता ही नहीं, दिया हुआ ही वापस आता है। यह जो आया, वह मेरे ही कर्म के उदय से आया है, सामने वाला तो निमित्त है।

टकराए, अपनी ही भूल से

इस दुनिया में जो भी टकराव होता है, वह आपकी ही भूल है, सामने वाले की भूल नहीं है! सामने वाले तो टकराएँगे ही। 'आप क्यों टकराए?' तब कहेंगे, 'सामने वाला टकराया इसलिए!' तो आप भी अंधे और वह भी अंधा हो गया।

टकराव हुआ तो आपको समझना चाहिए कि 'ऐसा मैंने क्या कह दिया

कि यह टकराव हो गया?' खुद की भूल मालूम हो जाएगी तो हल आ जाएगा। फिर पज़ल सॉल्व हो जाएगी। वर्ना जब तक हम 'सामने वाले की भूल है' ऐसा खोजने जाएँगे तो कभी भी यह पज़ल सॉल्व नहीं होगा। 'अपनी ही भूल है' ऐसा मानोगे तभी इस संसार का अंत आएगा। अन्य कोई उपाय नहीं है। किसी के भी साथ टकराव हुआ, तो वह अपनी ही अज्ञानता की निशानी है।

यदि एक बच्चा पत्थर मारे और खून निकल आए, तब बच्चे पर क्या करोगे? गुस्सा करोगे। और आप जा रहे हों और पहाड़ पर से एक पत्थर गिरा, आपको वह लगा और खून निकला, तब फिर क्या करोगे? गुस्सा करोगे? नहीं। उसका क्या कारण? वह पत्थर पहाड़ पर से गिरा है। और वहाँ वह लड़का पत्थर मारने के बाद पछता रहा हो कि मुझसे यह क्या हो गया! और यह पहाड़ पर से गिरा, तो किसने किया?

विज्ञान, समझने जैसा

प्रश्नकर्ता : हमें क्लेश नहीं करना हो, लेकिन कोई सामने से आकर झगड़ने लगे, तब क्या करें?

दादाश्री : इस दीवार के साथ कोई लड़ेगा तो कितने समय तक लड़ सकेगा? यदि इस दीवार से कभी सिर टकरा जाए, तो आप उसके साथ क्या करोगे? सिर टकराया, यानी आपकी दीवार से लड़ाई हो गई, अब क्या दीवार को मारोगे? इसी प्रकार ये जो बहुत क्लेश कराते हैं, वे सभी दीवारें हैं! इसमें सामने वाले को क्या देखना, आपको अपने आप समझ लेना है कि ये दीवारों जैसे हैं, फिर कोई तकलीफ़ नहीं है।

आपको इस दीवार को डाँटने की सत्ता है? ऐसा ही सामने वाले के लिए है। और उसके निमित्त से जो टकराव है, वह तो छोड़ेगा नहीं। व्यर्थ शोर मचाने का क्या मतलब? जब कि उसके हाथ में सत्ता ही नहीं है। इसलिए आप भी दीवार जैसे हो जाओ न! आप बीवी को डाँटते रहते हो, तो उसके अंदर जो भगवान बैठे हैं, वे नोट करते हैं कि यह मुझे डाँटता है। और यदि वह आपको डाँटे, तब आप दीवार जैसे बन जाओ तो आपके भीतर बैठे हुए भगवान आपको 'हेल्प' करेंगे।

किसी के साथ मतभेद होना और दीवार से टकराना, ये दोनों बातें समान हैं। इन दोनों में भेद नहीं है। दीवार से जो टकराता है, वह नहीं दिखने की वज़ह से टकराता है और मतभेद होता है, वह भी नहीं दिखने की वज़ह से मतभेद होता है। आगे का उसे दिखता नहीं है, आगे का उसे सोल्युशन नहीं मिलता, इसलिए मतभेद होता है। ये क्रोध-मान-माया-लोभ वगैरह करते हैं, वह नहीं दिखने की वज़ह से ही करते हैं! तो ऐसे बात को समझना चाहिए न! जिसे लगी उसका दोष न! दीवार का कोई दोष है? तो इस संसार में सभी दीवारें ही हैं। दीवार टकराए, तब आप उसके साथ खरी-खोटी करने नहीं जाते न? कि 'यह मेरा सही है' ऐसे लड़ने की झंझट में आप नहीं पड़ते न? वैसे ही ये सभी दीवार की स्थिति में ही हैं। उससे सही मनवाने की ज़रूरत ही नहीं है।

टकराव, वह अज्ञानता ही है अपनी

टकराव होने का कारण क्या है? अज्ञानता। जब तक किसी के भी साथ मतभेद होता है, तो वह आपकी निर्बलता की निशानी है। लोग गलत नहीं हैं, मतभेद में गलती आपकी है। लोगों की ग़लती होती ही नहीं है। वह जान-बूझकर कर रहा हो, तो हमें वहाँ पर क्षमा माँग लेनी चाहिए कि, ''भैया, यह मेरी समझ में नहीं आता है।'' जहाँ टकराव हुआ, वहाँ अपनी ही भूल है।

घर्षण से हनन, शक्तियों का

सारी आत्मशक्ति यदि किसी चीज़ से खत्म होती हों, तो वह घर्षण से। संघर्ष से ज़रा भी टकराए तो खत्म। सामने वाला टकराए, तब हमें संयमपूर्वक रहना चाहिए। यदि सिर्फ घर्षण न हो, तो मनुष्य मोक्ष में चला जाए। किसी ने इतना ही सीख लिया कि 'मुझे घर्षण में नहीं आना है', तो फिर उसे गुरु की या किसी की भी ज़रूरत नहीं है। एक या दो जन्मों में सीधे मोक्ष में जाएगा। 'घर्षण में आना ही नहीं है' ऐसा यदि उसकी श्रद्धा में बैठ गया तब से ही वह समकित हो गया!

पहले जो घर्षण हो चुके थे और उससे जो नुकसान हुआ था,

वही वापस आता है। लेकिन अब यदि नया घर्षण पैदा करोगे, तो फिर शक्तियाँ चली जाएँगी। आई हुई शक्ति भी चली जाएगी और यदि खुद घर्षण होने ही न दें, तो शक्ति उत्पन्न होती रहेगी!

इस दुनिया में बैर से घर्षण होता है। संसार का मूल बीज बैर है। जिसके बैर और घर्षण-ये दो बंद हो गए, उसका मोक्ष हो गया। प्रेम बाधक नहीं है, बैर जाए तो प्रेम उत्पन्न होता है।

कॉमनसेन्स, ऐवरीव्हेर एप्लिकेबल

कोई हम से टकराए लेकिन हम किसी से नहीं टकराएँ, इस तरह रहें तो 'कॉमनसेन्स' उत्पन्न होगा। लेकिन हमें किसी से टकराना नहीं चाहिए, वर्ना 'कॉमनसेन्स' चला जाएगा! अपनी ओर से घर्षण नहीं होना चाहिए। सामने वाले के घर्षण से अपने में 'कॉमनसेन्स' उत्पन्न होता है। आत्मा की यह शक्ति ऐसी है कि घर्षण के समय कैसे बर्ताव करना, उसके सारे उपाय बता देती है और एक बार बता दे, तो फिर वह ज्ञान जाएगा नहीं। ऐसा करते करते 'कॉमनसेन्स' बढ़ता जाता है।

इस दीवार के लिए उल्टे विचार आएँ तो हर्ज नहीं है, क्योंकि एकपक्षीय नुकसान है। जब कि किसी जीवित व्यक्ति के लिए एक भी उल्टा विचार आया तो जोखिम है। दोनों तरफ से नुकसान होगा। लेकिन हम उसका प्रतिक्रमण करें तो सारे दोष चले जाएँगे। इसलिए जहाँ-जहाँ घर्षण होते हैं, वहाँ पर प्रतिक्रमण करो, तो घर्षण खत्म हो जाएँगे।

जिसे टकराव नहीं होगा, उसका तीन जन्मों में मोक्ष होगा, उसकी मैं गारन्टी देता हूँ। टकराव हो जाए, तो प्रतिक्रमण कर लेना। टकराव तो होंगे ही। जब तक यह विकारी बाबत है, संबंध हैं, तब तक टकराव होंगे ही। टकराव का मूल ही यह है। जिसने विषय को जीत लिया, उसे कोई नहीं हरा सकता। कोई उसका नाम भी नहीं ले सकता। उसका प्रभाव पड़ता है।

❖❖❖❖❖

हुआ सो न्याय

कुदरत तो हमेशा न्यायी ही है

जो कुदरत का न्याय है, उसमें एक क्षण के लिए भी अन्याय नहीं हुआ। यह कुदरत जो है, वह एक क्षण के लिए भी अन्यायी नहीं हुई। कोर्ट में अन्याय हुआ होगा, लेकिन कुदरत कभी अन्यायी हुई ही नहीं।

यदि कुदरत के न्याय को समझोगे कि 'हुआ सो न्याय', तो आप इस जगत् में से मुक्त हो पाओगे वर्ना कुदरत को ज़रा-सा भी अन्यायी समझा तो वह आपके लिए जगत् में उलझने का ही कारण है। कुदरत को न्यायी मानना, उसका नाम ज्ञान। 'जैसा है वैसा' जानना, उसका नाम ज्ञान और 'जैसा है वैसा' नहीं जानना, उसका नाम अज्ञान।

जगत् में न्याय ढूँढने से ही तो पूरी दुनिया में लड़ाइयाँ हुई हैं। जगत् न्याय स्वरूप ही है। इसलिए इस जगत् में न्याय ढूँढना ही मत। जो हुआ, सो न्याय। ये कोर्ट आदि सब बने वे, न्याय ढूँढते हैं इसलिए! अरे भाई, न्याय होता होगा?! उसके बजाय 'क्या हुआ' उसे देखो! वही न्याय है। न्याय-अन्याय का फल, वह तो हिसाब से आता है और हम उसके साथ न्याय जॉइन्ट करने जाते हैं, फिर कोर्ट में ही जाना पड़ेगा न!

आपने किसी को एक गाली दी तो फिर वह आपको दो-तीन गालियाँ दे देगा, क्योंकि उसका मन आप पर उबल रहा होता है। तब लोग क्या कहते हैं? तूने क्यों तीन गालियाँ दी, इसने तो एक ही दी थी। तब उसमें क्या न्याय है? उसका हमें तीन ही देने का हिसाब होगा, पिछला हिसाब चुकता कर लेगा या नहीं? कुदरत का न्याय क्या है? जो पिछला हिसाब होता है, वह सारा इकट्ठा कर देती है। अब यदि कोई स्त्री उसके पति को परेशान कर रही हो, तो वह कुदरती न्याय है। उसका पति समझता है कि यह पत्नी बहुत खराब है और पत्नी क्या समझती है कि पति खराब है। लेकिन यह कुदरत का न्याय ही है।

वह तो इस जन्म की पसीने की कमाई है, लेकिन पहले का सारा

हिसाब है न! बही खाता बाकी है इसलिए, वर्ना कोई कभी हमारा कुछ भी नहीं ले सकता। किसी से ले सके, ऐसी शक्ति ही नहीं है। और ले लेना वह तो हमारा कुछ अगला-पिछला हिसाब है। इस दुनिया में ऐसा कोई पैदा ही नहीं हुआ कि जो किसी का कुछ कर सके। इतना नियम वाला जगत् है।

कारण का पता चले, परिणाम पर से

यह सब रिज़ल्ट है। जैसे परीक्षा का रिज़ल्ट आता है न, यह गणित में सौ मार्क्स में से पंचानवे मार्क्स आएँ और इंग्लिश में सौ मार्क्स में से पच्चीस मार्क्स आएँ। तब क्या हमें पता नहीं चलेगा कि इसमें कहाँ भूल रह गई है? इस परिणाम पर से, किस-किस कारण से भूल हुई वह हमें पता चलेगा न? ये सारे संयोग जो इकट्ठा होते हैं, वे सभी परिणाम हैं। और उस परिणाम पर से, क्या कॉज़ था, वह हमें पता चलता है।

इस रास्ते पर सभी लोगों का आना-जाना हो और वहाँ बबूल का काँटा सीधा पड़ा हुआ हो, बहुत से लोग आते-जाते हैं लेकिन काँटा वैसे का वैसा पड़ा रहता है। वैसे तो आप कभी भी बूट-चप्पल पहने बगैर घर से नहीं निकलते लेकिन उस दिन किसी के यहाँ गए और शोर मचे कि चोर आया, चोर आया, तब आप नंगे पैर दौड़े और काँटा आपके पैर में लग जाए। तो वह आपका हिसाब!

कोई दुःख दे तो जमा कर लेना। जो तूने पहले दिया होगा, वही वापस जमा करना है। क्योंकि यहाँ बिना वजह कोई किसी को दुःख पहुँचा सके, ऐसा कानून ही नहीं है। उसके पीछे कॉज़ होने चाहिए। इसलिए जमा कर लेना।

भगवान के यहाँ कैसा होता है?

भगवान न्याय स्वरूप नहीं है और भगवान अन्याय स्वरूप भी नहीं है। किसी को दुःख नहीं हो, वही भगवान की भाषा है। न्याय-अन्याय तो लोकभाषा है।

चोर, चोरी करने को धर्म मानता है, दानी, दान देने को धर्म मानता है। ये लोकभाषा है, भगवान की भाषा नहीं है। भगवान के यहाँ ऐसा वैसा कुछ है ही नहीं। भगवान के यहाँ तो इतना ही है कि, 'किसी जीव को दु:ख नहीं हो, वही हमारी आज्ञा है!'

निजदोष दिखाएँ अन्याय

केवल खुद के दोष के कारण पूरा जगत् अनियमित लगता है। एक क्षण के लिए भी अनियमित हुआ ही नहीं। बिल्कुल न्याय में ही रहता है। यहाँ की कोर्ट के न्याय में फर्क पड़ जाए, वह गलत निकले लेकिन इस कुदरत के न्याय में फर्क नहीं होता।

और एक सेकन्ड के लिए भी न्याय में फर्क नहीं होता। यदि अन्यायी होता तो कोई मोक्ष में जाता ही नहीं। ये तो कहते हैं कि अच्छे लोगों को परेशानियाँ क्यों आती हैं? लेकिन लोग, ऐसी कोई परेशानी पैदा नहीं कर सकते। क्योंकि खुद यदि किसी बात में दखल नहीं करे तो कोई ताक़त ऐसी नहीं है कि जो आपका नाम दे। खुद ने दखल की है इसलिए यह सब खड़ा हो गया है।

जगत् न्याय स्वरूप

यह जगत् गप्प नहीं है। जगत् न्याय स्वरूप है। कुदरत ने कभी भी बिल्कुल, अन्याय नहीं किया। कुदरत कहीं पर आदमी को काट देती है, एक्सिडेन्ट हो जाता है, वह सब न्याय स्वरूप है। न्याय के बाहर कुदरत गई नहीं। यह बेकार ही नासमझी में कुछ भी कहते रहते हैं और जीवन जीने की कला भी नहीं आती, और देखो तो चिंता ही चिंता। इसलिए जो हुआ उसे न्याय कहो।

'हुआ सो न्याय' समझे तो पूरा संसार पार हो जाए, ऐसा है। इस दुनिया में एक सेकन्ड भी अन्याय होता ही नहीं। न्याय ही हो रहा है। लेकिन बुद्धि हमें फँसाती है कि इसे न्याय कैसे कह सकते हैं? इसलिए हम मूल बात बताना चाहते हैं कि यह कुदरत का है और बुद्धि से आप

अलग हो जाओ। बुद्धि इसमें फँसाती है। एक बार समझ लेने के बाद बुद्धि का मानना मत। हुआ सो न्याय। कोर्ट के न्याय में उल्टा-सीधा हो जाता है, लेकिन इस न्याय में कोई फर्क नहीं।

न्याय खोजते-खोजते तो दम निकल गया है। इन्सान के मन में ऐसा होता है कि मैंने इसका क्या बिगाड़ा है, जो यह मेरा बिगाड़ता है। न्याय ढूँढने गए, उसकी यह सब मार पड़ी है, इसलिए न्याय नहीं ढूँढना। न्याय खोजने से इन सभी को (मार खा-खाकर) निशान पड़ गए और फिर भी अंत में हुआ तो वही का वही। आखिर में वही का वही आ जाता है। तो फिर पहले से ही क्यों न समझ जाएँ? यह तो केवल अहंकार की दखल है!

विकल्पों का अंत, यही मोक्ष मार्ग

बुद्धि जब भी विकल्प करवाए न, तब कह देना, जो हुआ वही न्याय। बुद्धि न्याय ढूँढती है कि ये मुझसे छोटा है और मर्यादा नहीं रखता। वह मर्यादा रखे वही न्याय और न रखे वह भी न्याय। बुद्धि जितनी निर्विवाद होगी, उतने ही हम निर्विकल्प होंगे फिर!

न्याय ढूँढने निकले तो विकल्प बढ़ते ही जाएँगे और यह कुदरती न्याय विकल्पों को निर्विकल्प बनाता जाता है। जो हो चुका है, वही न्याय है। और इसके बावजूद भी पाँच आदमियों का पंच जो कहे, वह भी उसके विरूद्ध में चला जाता है, तब वह उस न्याय को भी नहीं मानता, किसी की बात नहीं मानता। तब फिर विकल्प बढ़ते ही जाते हैं। अपने इर्द-गिर्द जाल ही बुन रहा है वह आदमी कुछ भी प्राप्त नहीं करता। बहुत दुःखी हो जाता है! इसके बजाय पहले से ही श्रद्धा रखना कि हुआ सो न्याय।

और कुदरत हमेशा न्याय ही करती रहती है, निरंतर न्याय ही कर रही है लेकिन वह प्रमाण नहीं दे सकती। प्रमाण तो 'ज्ञानी' देते हैं कि कैसे यह न्याय है? कैसे हुआ, वह 'ज्ञानी' बता देते हैं। उसे संतुष्ट कर देते हैं और तब निबेड़ा आता है। निर्विकल्पी हो जाएगा तो निबेड़ा आएगा।

❖❖❖❖❖

भुगते उसी की भूल

कुदरत के न्यायालय में...

इस जगत् के न्यायाधीश तो जगह-जगह होते हैं लेकिन कर्म जगत् के कुदरती न्यायाधीश तो एक ही हैं, 'भुगते उसी की भूल'। यही एक न्याय है, जिससे पूरा जगत् चल रहा है और भ्रांति के न्याय से पूरा संसार खड़ा है।

एक क्षणभर के लिए भी जगत् न्याय से बाहर नहीं रहता। जिसे इनाम देना हो, उसे इनाम देता है। जिसे दंड देना हो, उसे दंड देता है। जगत् नियम के बाहर नहीं चलता, नियमानुसार ही है, संपूर्ण न्यायपूर्वक ही है। लेकिन सामने वाले की दृष्टि में नहीं दिखने से समझ नहीं पाता। जब दृष्टि निर्मल होगी, तब न्याय दिखेगा। जब तक स्वार्थ दृष्टि होगी, तब तक न्याय कैसे दिखेगा?

आपको क्यों भुगतना?

हमें दुःख क्यों भुगतना पड़ा, यह ढूँढ निकालो न? यह तो हम अपनी ही भूल से बँधे हुए हैं। लोगों ने आकर नहीं बाँधा। वह भूल खत्म हो जाए तो फिर मुक्त। और वास्तव में तो मुक्त ही हैं, लेकिन भूल की वज़ह से बँधन भुगतते हैं।

जगत् की वास्तविकता का रहस्यज्ञान लोगों के लक्ष्य में है ही नहीं और जिससे भटकना पड़ता है, वह अज्ञान-ज्ञान के बारे में तो सभी को खबर है। यह जेब कटी, उसमें भूल किसकी? इसकी जेब नहीं कटी और तुम्हारी ही क्यों कटी? आप दोनों में से अभी कौन भुगत रहा है? 'भुगते उसी की भूल!'

भुगतना खुद की भूल के कारण

जो दुःख भुगते, उसी की भूल और जो सुख भोगे तो, वह उसका इनाम। लेकिन भ्रांति का कानून निमित्त को पकड़ता है। भगवान का

कानून, वह तो जिसकी भूल होगी, उसी को पकड़ेगा। यह कानून एक्ज़ेक्ट है और उसमें कोई परिवर्तन कर ही नहीं सकता। जगत् में ऐसा कोई कानून नहीं है कि जो किसीको *भोगवटा* (सुख-दु:ख का असर) दे सके!

हमारी कुछ भूल होगी तभी तो सामने वाला कहेगा न? इसलिए भूल खत्म कर दो न! इस जगत् में कोई जीव किसी भी जीव को तकलीफ नहीं दे सकता, ऐसा स्वतंत्र है और जो तकलीफ देता है वह पहले जो दखलें की थी उसी का परिणाम है। इसलिए भूल खत्म कर डालो फिर हिसाब नहीं रहेगा।

जगत् दु:ख भोगने के लिए नहीं है, सुख भोगने के लिए है। जिसका जितना हिसाब होगा उतना ही होता है। कुछ लोग सिर्फ सुख ही भोगते हैं, वह कैसे? कुछ लोग सिर्फ दु:ख ही भोगते हैं वह कैसे? खुद ही ऐसा हिसाब लेकर आया है इसलिए। जो दु:ख खुद को भोगने पड़ते हैं वह खुद का ही दोष है, किसी दूसरे का नहीं। जो दु:ख देता है, उसकी भूल नहीं है। जो दु:ख देता है, उसकी भूल संसार में और भुगतता है उसकी भूल, ऐसा भगवान के नियम में।

परिणाम खुद की ही भूल का

जब कभी भी हमें कुछ भी भुगतना पड़ता है, वह अपनी ही भूल का परिणाम है। अपनी भूल के बिना हमें भुगतना नहीं होता। इस जगत् में ऐसा कोई भी नहीं है कि जो हमें किंचित्मात्र भी दु:ख दे सके और यदि कोई दु:ख देने वाला है, तो वह अपनी ही भूल है। सामने वाले का दोष नहीं है, वह तो निमित्त है। इसलिए 'भुगते उसी की भूल'।

कोई पति और पत्नी आपस में बहुत झगड़ रहे हों और जब दोनों सो जाएँ, फिर आप गुपचुप देखने जाओ तो पत्नी गहरी नींद सो रही होती है और पति बार-बार करवटें बदल रहा होता है, तो आप समझ लेना कि पति की भूल है सारी, क्योंकि पत्नी नहीं भुगत रही है। जिसकी भूल होती है, वही भुगतता है और उस समय यदि पति सो रहा हो और

पत्नी जाग रही हो, तो समझना कि पत्नी की भूल है। 'भुगते उसी की भूल'। पूरा जगत् निमित्त को ही काटने दौड़ता है।

भगवान का क्या कानून?

भगवान का कानून तो क्या कहता है कि जिस क्षेत्र में, जिस समय पर, जो भुगतता है, वह खुद ही गुनहगार है। किसी की जेब कट जाए तो काटने वाले की आनंद की परिणति होगी, वह तो होटल में चाय-पानी और नाश्ता कर रहा होगा और ठीक उसी समय जिसकी जेब कटी है, वह भुगत रहा होगा। इसलिए भुगतने वाले की भूल। उसने पहले कभी चोरी की होगी, इसलिए आज पकड़ा गया इसलिए वह चोर और जेब काटने वाला जब पकड़ा जाएगा, तब चोर कहलाएगा।

पूरा जगत् सामने वाले की गलती देखता है। भुगतता है खुद, लेकिन गलती सामने वाले की देखता है। बल्कि इससे तो गुनाह दुगने होते जाते हैं और व्यवहार भी उलझता जाता है। यह बात समझ गए तो उलझन कम होती जाएगी।

इस जगत् का नियम ऐसा है कि जो आँखों से दिखे, उसे भूल कहते हैं। जबकि कुदरत का नियम ऐसा है कि जो भुगत रहा है, उसी की भूल है।

किसी को किंचित् मात्र दुःख नहीं दें और कोई हमें दुःख दे तो उसे जमा कर लें तो हमारे बही खाते का हिसाब पूरा हो जाएगा। किसी को नहीं दें, नया व्यापार शुरू नहीं करें और जो पुराना हो उसको छोड़ दें, यानी हिसाब चुक गया।

उपकारी, कर्म से मुक्ति दिलाने वाले

जगत् में किसी का दोष नहीं है, दोष निकालने वाले का दोष है। जगत् में कोई दोषित है ही नहीं। सब अपने-अपने कर्मों के उदय से है। जो भी भुगत रहे हैं, वह आज कोई गुनाह नहीं करते हैं। पिछले जन्म के कर्म के फलस्वरूप यह सब हो रहा है। आज तो उसे पछतावा

हो रहा हो लेकिन वह कॉन्ट्रैक्ट हो चुका है न, तो अब क्या हो सकता है? उसे पूरा किए बिना चारा ही नहीं है।

बहू सास को दु:ख देती है या सास बहू को दु:ख देती है, उसमें किसे भुगतना पड़ता है? सास को, तो सास की भूल है। सास बहू को दु:ख देती हो तो बहू को इतना समझ जाना चाहिए कि मेरी भूल है। इन दादा के ज्ञान के आधार पर समझ जाना कि भूल होगी, तभी ये गालियाँ देती है। इसलिए सास का दोष नहीं निकालना चाहिए। सास का दोष निकालने से यह ज़्यादा उलझ गया है, कॉम्प्लेक्स (जटिल) होता रहता है और सास को बहू परेशान करती हो तो सास को दादा के ज्ञान से समझ जाना चाहिए कि भुगतता है उसकी भूल, इस हिसाब से मुझे निभा लेना चाहिए।

छूटना हो तो जो-जो कुछ कड़वा-मीठा आएँ (गालियाँ, अपमान वगैरह), उसे जमा कर लेना। हिसाब चुकता हो जाएगा। इस जगत् में हिसाब के बगैर तो आँख भी नहीं मिलती, तो दूसरा सब तो हिसाब के बगैर होता होगा? आपने जितना-जितना, जिसे-जिसे दिया होगा, उतना-उतना वह आपको वापस देगा, तब आप खुश होकर जमा कर लेना कि हाश! अब बहीखता पूरा होगा, नहीं तो भूल करोगे तो वापस भुगतना ही पड़ेगा।

खुद की भूलों के ही मार खा रहे हैं। जिसने पत्थर फेंका उसकी भूल नहीं है, जिसे पत्थर लगा उसकी भूल है! आपके इर्द-गिर्द के बाल-बच्चों की कैसी भी भूलें या दुष्कृत्य हों, लेकिन यदि उसका असर आप पर नहीं होता तो आपकी भूल नहीं है और अगर आप पर असर होता है तो वह आपकी ही भूल है, ऐसा निश्चित रूप से समझ लेना!

ऐसा पृथक्करण तो करो

भूल किसकी है? तब कहेंगे कि कौन भुगत रहा है, इसका पता लगाओ। नौकर के हाथों से दस गिलास टूट गए तो उसका असर घर के लोगों पर होगा या नहीं होगा? अब घर के लोगों में बच्चों को तो

कुछ भुगतने का नहीं होता, लेकिन उनके माँ-बाप अकुलाते रहेंगे। उसमें भी माँ थोड़ी देर बाद आराम से सो जाएगी, लेकिन बाप हिसाब लगाता रहेगा, कि पचास रुपयों का नुकसान हुआ। वह ज़्यादा अलर्ट है, इसलिए ज़्यादा भुगतेगा। इस पर से ही 'भुगते उसी की भूल'। वह इतना पृथक्करण करते-करते आगे बढ़ता जाएगा, तो सीधा मोक्ष में पहुँच जाएगा।

प्रश्नकर्ता : कुछ लोग ऐसे होते हैं कि हम कितना भी अच्छा वर्तन करें, लेकिन वे समझते ही नहीं?

दादाश्री : वे नहीं समझते हों तो वह अपनी ही भूल का परिणाम है। यह जो दूसरों की भूल देखते हैं, वह तो बिल्कुल गलत है। खुद की भूल से ही निमित्त मिलता है। यह तो जीवित निमित्त मिले तो उसे काटने दौड़ता है और अगर काँटा लगा हो तो क्या करेगा? चौराहे पर काँटा पड़ा हो और हज़ारों लोग गुज़र जाएँ फिर भी किसीको नहीं चुभता, लेकिन चंदूभाई निकले कि काँटा टेढ़ा पड़ा हो तो भी उसके पैर में चुभ जाता है। जिसे काँटा लगना हो उसी को लगेगा। सभी संयोग इकट्ठे कर देगी, लेकिन उसमें निमित्त का क्या दोष?

कोई पूछे कि मैं अपनी भूलें कैसे ढूँढूँ? तो हम उसे सिखाते हैं कि तुझे कहाँ-कहाँ भुगतना पड़ता है? वही तेरी भूल। तेरी क्या भूल हुई होगी कि ऐसा भुगतना पड़ा? यह ढूँढ निकालना।

मूल भूल कहाँ है?

भूल किसकी? भुगते उसकी! क्या भूल? तब कहते हैं कि 'मैं चंदूभाई हूँ' यह मान्यता ही आपकी भूल है। क्योंकि इस जगत् में कोई दोषित ही नहीं है। इसलिए कोई गुनहगार भी नहीं है, ऐसा सिद्ध होता है।

ये दुःख देते हैं, वे तो निमित्त मात्र हैं, लेकिन मूल भूल खुद की ही है। जो फायदा करता है, वह भी निमित्त है और जो नुकसान कराता है, वह भी निमित्त है, लेकिन वह अपना ही हिसाब है, इसलिए ऐसा होता है।

❖❖❖❖❖

खुद के दोष धोने का साधन - प्रतिक्रमण

क्रमण-अतिक्रमण-प्रतिक्रमण

संसार में जो कुछ भी हो रहा है वह क्रमण है। जब तक वह सहज रूप से होता है, तब तक क्रमण है, लेकिन यदि एक्सेस (ज़्यादा) हो जाए तो वह अतिक्रमण कहलाता है और जिसके प्रति अतिक्रमण हो जाए, उससे यदि छूटना हो तो उसका प्रतिक्रमण करना ही पड़ेगा, मतलब धोना पड़ेगा, तब साफ होगा। पूर्व जन्म में जो भाव किया कि, 'फलाने (व्यक्ति) को चार थप्पड़ मार देनी है।' इसी वजह से जब इस जन्म में वह रूपक में आता है, तब चार थप्पड़ मार दी जाती है। वह अतिक्रमण हुआ कहलाएगा, इसलिए उसका प्रतिक्रमण करना पड़ेगा। सामने वाले के 'शुद्धात्मा' को याद करके, उसके निमित्त से प्रतिक्रमण करना चाहिए।

कोई खराब आचरण हुआ, वह अतिक्रमण कहलाता है। जो खराब आचरण हुआ, वह तो दाग़ कहलाता है, फिर वह मन ही मन में काटता (चुभता) रहता है। उसे धोने के लिए प्रतिक्रमण करने पड़ेंगे। इस प्रतिक्रमण से तो सामने वाले का भी आपके लिए भाव बदल जाता है, खुद को भी अच्छे भाव होते हैं और औरों के भाव भी अच्छे हो जाते हैं। क्योंकि प्रतिक्रमण में तो इतनी अधिक शक्ति हैं कि बाघ भी कुत्ते जैसा बन जाता है! प्रतिक्रमण कब काम आता है? जब कोई उल्टे परिणाम खड़े हो जाएँ, तब काम आता है।

प्रतिक्रमण की यथार्थ समझ

तो प्रतिक्रमण यानी क्या? प्रतिक्रमण यानी सामने वाला हमारा जो अपमान करता है, तब हमें समझ जाना चाहिए कि इस अपमान का गुनहगार कौन है? ये करने वाला गुनहगार है या भुगतने वाला गुनहगार है, पहले हमें यह डिसीज़न लेना चाहिए। तो अपमान करने वाला वह बिल्कुल भी गुनहगार नहीं होता। वह निमित्त होता है। और अपने ही कर्म के उदय को लेकर वह निमित्त मिलता है। मतलब यह अपना ही गुनाह है। अब प्रतिक्रमण इसलिए करना है कि उसके प्रति खराब भाव

हुआ तो प्रतिक्रमण करना चाहिए। उसके लिए नालायक है, लुच्चा है, ऐसा मन में विचार आ गया हो तो प्रतिक्रमण करना है। बाकी कोई भी गाली दे तो वह अपना ही हिसाब है। यह व्यक्ति तो निमित्त है। जेब काटे तो वह काटने वाला निमित्त है और हिसाब अपना ही है। यह तो निमित्त को ही काटने दौड़ता है और उसी के यह सब झगड़े हैं।

दिनभर में जो व्यवहार करते हैं उसमें जब कुछ उल्टा हो जाता है, तो हमें पता चलता है कि इसके साथ उल्टा व्यवहार हो गया, पता चलता है या नहीं चलता? हम जो व्यवहार करते हैं, वह सब क्रमण है। क्रमण यानी व्यवहार। अब किसी के साथ उल्टा हुआ तब, हमें ऐसा पता चलता है कि इसके साथ कड़क शब्द निकल गए या वर्तन में उल्टा हुआ, वह पता चलता है या नहीं चलता? तो वह अतिक्रमण कहलाता है।

अतिक्रमण अर्थात् हम उल्टा चले। उतना ही सीधा वापस आए उसका नाम प्रतिक्रमण।

प्रतिक्रमण की यथार्थ विधि

प्रश्नकर्ता : प्रतिक्रमण में क्या करना है?

दादाश्री : मन-वचन-काया के योग, भावकर्म-द्रव्यर्कम-नोकर्म, चंदूलाल तथा चंदूलाल के नाम की सर्व माया से भिन्न, ऐसे उसके 'शुद्धात्मा' को याद करके कहना कि, 'हे शुद्धात्मा भगवान! मैंने ज़ोर से बोल दिया, वह भूल हो गई इसलिए उसकी माफी माँगता हूँ, और फिर से वह भूल नहीं करूँगा, ऐसा निश्चय करता हूँ, फिर कभी भी ऐसी भूल नहीं हो, ऐसी शक्ति देना।' 'शुद्धात्मा' को याद किया या दादा को याद करके कहा कि, 'यह भूल हो गई है'; तो वह आलोचना है, और उस भूल को धोना मतलब प्रतिक्रमण और 'ऐसी भूल फिर कभी भी नहीं करूँगा', ऐसा तय करना वह प्रत्याख्यान है! समाने वाले को नुकसान हो ऐसा करे अथवा उसे हमसे दु:ख हो, वे सभी अतिक्रमण हैं और उसका तुरंत ही आलोचना, प्रतिक्रमण और प्रत्याख्यान करना पड़ता है।

❖❖❖❖❖

प्रतिक्रमण विधि

प्रत्यक्ष दादा भगवान की साक्षी में, देहधारी (जिसके प्रति दोष हुआ हो, उस व्यक्ति का नाम) के मन-वचन-काया के योग, भावकर्म-द्रव्यकर्म-नोकर्म से भिन्न ऐसे हे शुद्धात्मा भगवान, आपकी साक्षी में, आज दिन तक मुझसे जो जो ★★ दोष हुए हैं, उसके लिए क्षमा माँगता हूँ। हृदयपूर्वक बहुत पश्चाताप करता हूँ। मुझे क्षमा कीजिए, क्षमा कीजिए, क्षमा कीजिए। और फिर से ऐसे दोष कभी भी नहीं करूँ, ऐसा दृढ़ निश्चय करता हूँ। उसके लिए मुझे परम शक्ति दीजिए, शक्ति दीजिए, शक्ति दीजिए।

★★ सारी ज़िंदगी दौरान क्रोध-मान-माया-लोभ, विषय-विकार, कषाय आदि से किसी को भी दुःख पहुँचाया हो, उन दोषों को मन में याद करें।

ऐसे (इस तरह) प्रतिक्रमण करने से लाइफ भी अच्छी बीतती है और मोक्ष में भी जा सकते हैं! भगवान ने कहा है कि, 'अतिक्रमण का प्रतिक्रमण करोगे तभी मोक्ष में जा पाओगे।'

त्रिमंदिर निर्माण का प्रयोजन

जब भी कभी मूल पुरुष, जैसे कि श्री महावीर भगवान, श्री कृष्ण भगवान, श्री राम भगवान सशरीर उपस्थित रहते हैं, तब वे लोगों को धर्म संबंधी मतमतांतरों से बाहर निकालकर आत्मधर्म में स्थिर करते हैं। परंतु कालक्रमानुसार मूल पुरुषों की अनुपस्थिति में आहिस्ता-आहिस्ता लोगों में मतभेद होने से धर्म में बाड़े-संप्रदायों का उद्भव होने के परिणामस्वरूप सुख और शांति का क्रमशः लोप होता है।

अक्रम विज्ञानी परम पूजनीय श्री दादा भगवान ने लोगों को आत्मधर्म की प्राप्ति तो करवाई ही, पर साथ-साथ धर्म में व्याप्त 'तू-तू, मैं-मैं' के झगड़ों को दूर करने और लोगों को संकीर्ण धार्मिक पक्षपात के दुराग्रह के जोखिमों से परे हटाने के लिए एक अनोखा, क्रांतिकारी कदम उठाया, जो है संपूर्ण निष्पक्षपाती धर्मसंकुल का निर्माण।

मोक्ष के ध्येय की पूर्णाहुति हेतु श्री महावीर स्वामी भगवान ने जगत को आत्मज्ञान प्राप्ति का मार्ग दिखाया था। श्री कृष्ण भगवान ने गीता के उपदेश में अर्जुन को 'आत्मवत् सर्वभूतेषु' की दृष्टि प्रदान की थी। जीव और शिव का भेद मिटने पर ही हम खुद ही शिव स्वरूप होकर चिदानंद रूपः शिवोऽहम् शिवोऽहम् की दशा को प्राप्त करते हैं। इस प्रकार सभी धर्मो के मूल पुरुषों के हृदय की बात आत्मज्ञान प्राप्ति की ही थी। अगर यह बात समझ में आ जाए तो उसके लिए पुरुषार्थ की शुरूआत होती है और हर एक को आत्मदृष्टि से देखने के साथ ही अभेदता उत्पन्न होती है। किसी भी धर्म का खंडन-मंडन नहीं हो, किसी भी धर्म के प्रमाण को ठेस न पहुँचे ऐसी भावना निरंतर रहा करती है।

परम पूजनीय दादा भगवान (दादाश्री) कहा करते थे कि जाने-अनजाने में किसी की भी विराधना हो गई हो, उन सभी की आराधना होने पर वे सारी विराधनाएँ धुल जाती हैं। ऐसे निष्पक्षपाती त्रिमंदिर संकुल में प्रवेश करके सभी भगवंतों की मूर्तियों के सम्मुख सहज रूप से मस्तक जब झुकता है तब भीतर की सारी पकडें, दुराग्रह, भेदभाव से भरी हुई सारी मान्यताएँ मिटने लगती हैं और निराग्रही होने लगते हैं।

दादा भगवान परिवार का मुख्य केन्द्र त्रिमंदिर अडालज में स्थित है। उसके अलावा गुजरात के अहमदाबाद, राजकोट, मोरबी, अमरेली, सुरेन्द्रनगर, भुज, गोधरा, भादरण, चलामली और वासणा (जि. वडोदरा) आदि जगहों पर निष्पक्षपाती त्रिमंदिरों का निर्माण हुआ है। मुंबई, वडोदरा और अंजार में त्रिमंदिर का निर्माण कार्य चालु है।

ज्ञानविधि क्या है?

☞ यह भेदज्ञान का प्रयोग है, जो प्रश्नोत्तरी सत्संग से भिन्न है।

☞ 1958 में परम पूज्य दादा भगवान को जो आत्मज्ञान प्रकट हुआ, वही ज्ञान आज भी उनकी कृपा से तथा पूज्य नीरू माँ के आशीर्वाद से, पूज्य दीपकभाई के माध्यम से प्राप्त होता है।

ज्ञान क्यों लेना चाहिए?

☞ जन्म-मरण के फेरों में से मुक्त होने के लिए।

☞ स्वयं का आत्मा जाग्रत करने के लिए ।

☞ पारिवारिक संबंधो और काम-काज में सुख-शांति अनुभव करने के लिए।

ज्ञानविधि से क्या प्राप्त होता है?

☞ आत्मजागृति उत्पन्न होती है।

☞ सही समझ से जीवन-व्यवहार पूर्ण करने की चाबियाँ प्राप्त होती हैं।

☞ अनंत काल के पाप भस्मीभूत हो जाते हैं।

☞ अज्ञान मान्यताएँ दूर होती हैं।

☞ ज्ञान जागृति में रहने से नये कर्म नहीं बंधते और पुराने कर्म निर्जरा होते हैं।

आत्मज्ञान प्राप्ति के लिए प्रत्यक्ष आना आवश्यक है ?

☞ आत्मज्ञान ज्ञानी की कृपा और आशीर्वाद का फल है। इसके लिए प्रत्यक्ष आना आवश्यक है।

☞ पूज्य नीरू माँ और पूज्य दीपकभाई के टीवी या वीसीडी सत्संग कार्यक्रम और दादाजी की पुस्तकें ज्ञान की भूमिका तैयार करा सकती हैं, परंतु आत्मसाक्षात्कार नहीं करवा सकते।

☞ अन्य साधनों से शांति अवश्य मिलती है परंतु जिस प्रकार पुस्तक में चित्रित दीपक प्रकाश नहीं दे सकता, परंतु प्रत्यक्ष प्रकाशित दीपक ही प्रकाश दे सकता है। उसी प्रकार आत्मा जाग्रत करने के लिए तो स्वयं आ कर ज्ञान प्राप्त करना पड़ता है।

☞ **ज्ञान प्राप्ति के लिए धर्म या गुरु बदलने नहीं हैं।**

☞ **ज्ञान अमूल्य है, अतः उसे प्राप्त करने के लिए कुछ भी मूल्य नहीं देना है।**

दादा भगवान फाउन्डेशन के द्वारा प्रकाशित हिन्दी पुस्तकें

1. आत्मसाक्षात्कार
2. ज्ञानी पुरुष की पहचान
3. सर्व दुःखों से मुक्ति
4. कर्म का सिद्धांत
5. आत्मबोध
6. मैं कौन हूँ ?
7. पाप-पुण्य
8. भुगते उसी की भूल
9. एडजस्ट एवरीव्हेयर
10. टकराव टालिए
11. हुआ सो न्याय
12. चिंता
13. क्रोध
14. प्रतिक्रमण (सं, ग्रं)
16. दादा भगवान कौन ?
17. पैसों का व्यवहार (सं, ग्रं)
19. अंतःकरण का स्वरूप
20. जगत कर्ता कौन ?
21. त्रिमंत्र
22. भावना से सुधरे जन्मोंजन्म
23. चमत्कार
24. प्रेम
25. समझ से प्राप्त ब्रह्मचर्य (सं, पू, उ)
28. दान
29. मानव धर्म
30. सेवा-परोपकार
31. मृत्यु समय, पहले और पश्चात्
32. निजदोष दर्शन से... निर्दोष
33. पति-पत्नी का दिव्य व्यवहार (सं)
34. क्लेश रहित जीवन
35. गुरु-शिष्य
36. अहिंसा
37. सत्य-असत्य के रहस्य
38. वर्तमान तीर्थंकर श्री सीमंधर स्वामी
39. माता-पिता और बच्चों का व्यवहार (सं)
40. वाणी, व्यवहार में... (सं)
41. कर्म का विज्ञान
42. सहजता
43. आप्तवाणी - 1
44. आप्तवाणी - 2
45. आप्तवाणी - 3
46. आप्तवाणी - 4
47. आप्तवाणी - 5
48. आप्तवाणी - 6
49. आप्तवाणी - 7
50. आप्तवाणी - 8
51. आप्तवाणी - 9
52. आप्तवाणी - 12 (पू)
53. आप्तवाणी - 13 (पू, उ)
55. आप्तवाणी - 14 (भाग-1, भाग-2)
57. ज्ञानी पुरुष (भाग-1)

(सं - संक्षिप्त, ग्रं - ग्रंथ, पू - पूर्वार्ध, उ - उत्तरार्ध)

★ दादा भगवान फाउन्डेशन के द्वारा गुजराती भाषा में भी कई पुस्तकें प्रकाशित हुई है। वेबसाइट **www.dadabhagwan.org** पर से भी आप ये सभी पुस्तकें प्राप्त कर सकते हैं।

★ दादा भगवान फाउन्डेशन के द्वारा हर महीने हिन्दी, गुजराती तथा अंग्रेजी भाषा में ''दादावाणी'' मैगेज़ीन प्रकाशित होता है।

संपर्क सूत्र

दादा भगवान परिवार

अडालज : **त्रिमंदिर**, सीमंधर सिटी, अहमदाबाद-कलोल हाईवे,
पोस्ट : अडालज, जि.-गांधीनगर, गुजरात - 382421
फोन : 9328661166, 9328661177
E-mail : info@dadabhagwan.org

मुंबई : **त्रिमंदिर,** ऋषिवन, काजुपाडा, बोरिवली (E)
फोन : 9323528901

दिल्ली	9810098564	**बेंगलूर**	9590979099
कोलकता	9830080820	**हैदराबाद**	9885058771
चेन्नई	7200740000	**पूणे**	7218473468
जयपुर	8890357990	**जलंधर**	9814063043
भोपाल	6354602399	**चंडीगढ़**	9780732237
इन्दौर	6354602400	**कानपुर**	9452525981
रायपुर	9329644433	**सांगली**	9423870798
पटना	7352723132	**भुवनेश्वर**	8763073111
अमरावती	9422915064	**वाराणसी**	9795228541

U.S.A. : **DBVI Tel. :** +1 877-505-DADA (3232),
Email : info@us.dadabhagwan.org

U.K. : +44 330-111-DADA (3232)

Kenya : +254 722 722 063

UAE : +971 557316937

Dubai : +971 501364530

Australia : +61 421127947

New Zealand : +64 21 0376434

Singapore : +65 81129229

www.dadabhagwan.org

ज्ञानविधि



ज्ञानविधि, अनंत जन्मों से अपने निज स्वरूप की, आत्मस्वरूप की अनुभूति के लिए प्यासे मुमुक्षुओं के लिए ज्ञानी पुरुष परम पूज्य दादा भगवान की अक्रम विज्ञान के माध्यम द्वारा आत्मसाक्षात्कार पाने के लिए दी गई अनमोल भेंट है। ज्ञानविधि, 'मैं' (आत्मा) और 'मेरा' (मन-वचन-काया) के बीच भेदरेखा डालने वाला, ज्ञानी पुरुष की विशेष आध्यात्मिक सिद्धि के द्वारा होने वाला ज्ञानप्रयोग है। इस आत्मज्ञान से शाश्वत आनंद की प्राप्ति होती है और चिंताओं से मुक्त होते जाते हैं। सांसारिक संबंध शांतिमय होते जाते हैं और व्यवहारिक उलझनों का समाधान प्राप्त करने में उपयोगी साबित होता है।

- दादाश्री

ISBN 978-93-86289-27-8

9 789386 289278

Printed in India

Price ₹10

dadabhagwan.org